घोषणा पत्र

मैं **सन्तोष कुमार मंडल** घोषणा करता हूँ कि एम.फिल. हिंदी (हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग) के लिए प्रस्तुत "अनदेखे अनजान पुल (उपन्यास) में स्त्री-सौंदर्य के आयाम" विषय पर **डॉ. बीर पाल सिंह यादव** ,सहायक प्रोफेसर के नियमित निर्देशन में मैंने अपना लघु शोध-प्रबंध पूरा किया है।

यह मेरा पूर्णत: मौलिक कार्य है तथा मेरे संज्ञान में इसे अंशतः या पूर्णत: इस विश्वविद्यालय या किसी अन्य संस्थान में प्रस्तुत नहीं किया गया है।

स्थान:

दिनांक :

शोधार्थी

सन्तोष कुमार मंडल

पंजीयन सं.2014/02/215/015

हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग

मा.गां.अं.हिं.वि.वि.वर्धा (महाराष्ट्र)

भूमिका

भूमिका

साहित्यकारों का कार्य हैं सामाजिक समस्याओं,प्रश्नों को साहित्य के विविध विधाओं के माध्यम से उठाना और हो सके तो समाधान भी बताना। कई साहित्यकार हैं जिन्होंने सामाजिक समस्याओं को बहुत ही गंभीरता से अपना सामाजिक दायित्व समझ कर उठाया और उसका समाधान भी सुझाया, कई साहित्यकारों ने प्रश्न तो उठाया पर समाधान ढूँढने का कार्य पाठक पर छोड़ दिया। प्रेमचंद के अधिकांश उपन्यासों में समस्या बताने के साथ-साथ समाधान भी बताया गया है। और जैनेन्द्र जैसे भी लेखक हुए हैं जिन्होंने सामाजिक समस्याओं को हू -ब-हू कुछ फेंटसी के माध्यम से लिखा है।

'हंस' पत्रिका के माध्यम से राजेन्द्र यादव ने बखूबी अपने सामाजिक, साहित्यिक दायित्व को समझ कर भलीभाँति जीवनपर्यंत कार्य करते रहे। राजेन्द्र यादव की स्त्री-विमर्श और दलित विमर्श को गति देने में अहम भूमिका रही है।'अनदेखे अनजान पुल'(उपन्यास) राजेन्द्र यादव ने 1963 ई. में लिखा है।

इस उपन्यास की नायिका 'निन्नी'का रंग काला है। जब बार-बार अपने परिवार वालों या रिश्तेदारों के द्वारा यह कहते-सुनती है कि-

"वकील साहब के चार बच्चों का रंग- रुप भी साफ है और नाक- नक्शे भी दुरुस्त है, यही बेचारी जाने कैसे सबसे अलग जा पड़ी है|" आगे पन्ना परचूनिया कहता, "जाने कैसे बेचारी की शादी होगी ?"[1]

आगे राजेंद्र यादव इस उपन्यास में कहते हैं -

"घर में भाभी(माँ) रात दिन माथे पर हाथ मारती रहती , "हाय इसका जाने क्या होगा ...?भगवान जाने कैसे इसका बेड़ा पार लगायेगा ? राम जाने क्या- क्या दिन दिखाएगी यह लड़की।"[2]

इन बातों को सुन-सुन कर 'निन्नी'के मन में जो घाव आकार लेने लगते है, जिससे वह व्याकुल हो जाती है। उसके मन में जिजीविषा का भाव नहीं रहता , वह कई बार अपने आप को खत्म करने की कोशिश

[1] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-18

[2] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-18

भी करती है और अपने-आपको हीन भावना से ग्रस्त कर लेती है। वह आजीवन अपने आप को दोषी मान बैठती है। जबकि काला, गोरा, सांवला आदि होना पूर्ण रूप से प्रकृति पर निर्भर है।

पुरुष प्रधान समाज ने किस तरह का पैमाना बनाया है? सुंदरता को लेकर 'निन्नी'जैसी लाखों लड़कियॉ भगवान, ईश्वर, अल्लाह आदि प्रकृति के प्रतिरूपों को प्रार्थना पत्र दे कर जन्म नहीं लेती हैं, फिर भी उन्हें दोषी क्यों माना जाता है? उनसे सामान्य व्यवहार क्यों नहीं किया जाता है? क्या सभ्य समाज की यही कसौटी है? और 'निन्नी'जैसी लाखों लड़कियों को समाज में सामान्य जीवन जीने क्यों नहीं दिया जाता हैं? ऐसे भी सुंदरता या कुरूपता स्थाई नहीं होती।

आज हम उत्तराधुनिकता के युग में जीवन-यापन कर रहे हैं जिसके अंतर्गत मेडिकल साइन्स ने इतनी तरक्की की है कि कोई भी व्यक्ति, जो आर्थिक रूप से समृद्ध हो , प्लास्टिक सर्जरी के माध्यम से पूर्ण रूप से अपने आप को बदल डालने में कामयाब हो जाते हैं। लेकिन सामान्य स्त्रियों के लिए यह संभव नहीं है। भारतीय समाज आज भी आर्थिक-सामाजिक रूप से काफी पिछड़ा है। इतना जानने-समझने के बाद भी भारतीय समाज के नियामक कर्ता पुरुष है और ये पुरुष अपना हित साधने के लिए अपनी बनाई पुरानी रुढ़िवादी अवधारणाओं को तोड़ना नहीं चाहते और इसलिए 'निन्नी'जैसी लाखों स्त्रियों को जीवन में प्रतिदिन सामाजिक यथार्थ से सामना करना पड़ता है। समाज को कालापन और कुरूपता पसंद नहीं है यह सामाजिक धारणा पहले से बनी–बनाई है कि जो गोरा है, वही सुंदर है।

हमारा उददेश्य हैं कि सौंदर्य के आयाम को भलीभाँति समझते हुए इस शोध से एक सार्थक निष्कर्ष तक पहुंचे, जिससे समाज में रह रही 'निन्नी'जैसी लाखों स्त्रियों को समानता मिल सके।

वैश्वीकरण के दौर में भारतीय समाज में ही नहीं बल्कि विकसित देशों में भी कालापन और कुरूपता को बहुत अच्छा नहीं समझा जाता है। कुरूपता या कालापन उसके शरीर का अंग है, जिसे वह निकाल कर फेंक नहीं सकती। (संदर्भ :डॉ.कुसुम त्रिपाठी,स्त्री अस्मिता के सौ साल,पृष्ठ-172)

कोई भी शोध कार्य बिना प्रश्न के नहीं किया जाता। शोध कार्य का एक अपना महत्व होता है और जीवन तथा समाज में योगदान भी। स्वतन्त्रता, समानता, सहिष्णुता और भाई-चारे के लिए अलग-अलग देशों में संघर्ष का दौर चल रहा है। राजेन्द्र यादव ने इस प्रश्न को 1963 ई. में उठाया था। मेरी जानकारी में अन्य कोई इस प्रश्न के साथ खड़ा नज़र नहीं आता। निराला का एक उपन्यास है 'अप्सरा'। इस उपन्यास में वेश्या पुत्री 'कनक' की अप्रतिम सुंदरता को रेखांकित किया है। लेकिन निराला ने बाहरी सुंदरता की

अपेक्षा उसकी बौद्धिक सुंदरता को ज्यादा महत्व दिया है। यह प्रश्न मानवता का है, इसलिए इस प्रश्न से जूझना नितांत आवश्यक है।

'अनदेखे अनजान पुल' में स्त्री सौंदर्य के आयाम' पर स्वतंत्र रूप से कोई सामग्री उपलब्ध नहीं है। हिंदी में इस विषय को लेकर कोई शोध कार्य नहीं हुआ है, ऐसा नहीं है। जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केंद्र में 'बसंती और अनारो' में स्त्री-जीवन को लेकर (एम.फिल.)शोध कार्य हो रहा है। तथा महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविदलय के स्त्री-अध्ययन विभाग में 'हिंदी सिनेमा और स्त्री सौंदर्य' विषय पर एम.फिल. हो चुका है। इसके अतिरिक्त मेरे संज्ञान में देश के किसी भी प्रमुख विश्वविद्यालय में इस विषय पर कोई शोध कार्य नहीं हुआ है ,ऐसा कहना गलत है, खोज की भी सीमा होती है।

साहित्य और समाज का रिश्ता आरंभ से रहा है, इसलिए 'साहित्य समाज का दर्पण है' जैसी उक्तियाँ लम्बे समय से साहित्यिक आलोचना में चलती आ रही है। 'साहित्य' सामाजिक अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम तो रहा ही है, भले ही आज उस रूप में न हो जिस रूप में साहित्य की भूमिका औपनिवेशिक काल में रही थी। औपनिवेशिक काल में जहां कहानी, नाटक या निबंध के माध्यम से आज़ादी के लिए लोगों को अपने अधिकार और कर्तव्य के प्रति जागरुक किया जाता था।

अफ्रीकी देशों से लेकर तीसरी दुनिया के अधिकांश देशों में स्त्री-विमर्श का दौर चल रहा है। जिस प्रश्न को राजेन्द्र यादव ने 1963 ई. में उठाया था। टोल्स्तोय ने कहा था कि **"युद्ध लड़ाई के मैदानों में लड़े नहीं जाते। वस्तुतः वे लड़े जाते हैं बंद कमरों में बिस्तरों पर।"**[1] ये सुंदरता के पैमाने पुरुषों द्वारा बनाए गए हैं। ये भी सामान्य पुरुषों द्वारा नहीं बल्कि समाज के उन कुटिल बुद्धिजीवियों के द्वारा जो सत्ता शासन में काबिज हैं या सत्ता के संचालक है।

राजेन्द्र यादव कहते है-"उपन्यास के पात्रों का विश्लेषण वहाँ इस तरह नहीं होता कि उसमें कितनी वास्तविकता और अवास्तविकता है, वैसा किसी के साथ हुआ या नहीं; बल्कि इस आधार पर होता है कि पात्रों के विकास और निर्माण के लिए लेखक ने जो युक्ति या तर्क निर्धारित किए हैं; वे कितने स्वीकार्य या अस्वीकार्य हैं? कभी ये युक्ति और तर्क केवल कृति में होते हैं और कभी लेखकीय व्यक्तित्व में, कभी

[1] अठारह उपन्यास,पृष्ठ -207

इन दोनों में न होकर उस युग और माहौल में इनके रेशों को महसूस करना होता है।[1]" अब यह प्रश्न विकराल रूप में हमारे समक्ष है। और यह प्रश्न एक चुनौती के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित है। राजेन्द्र यादव के आलवा अधिकांश साहित्यकारों ने इस प्रश्न पर गम्भीर चिन्तन नहीं किया।

यह प्रश्न विश्व की आधी आबादी से जुड़ा हुआ है| जन-जन तक यह संदेश पहुंचाना नितांत जरूरी है कि स्त्री-सौंदर्य के पैमाने बदल चुके है, जिन्हें सिर्फ यह मालूम हैं कि गोरा होना ही सौंदर्य है। इस अवधारणा को तोड़ते हुए, स्त्री–सौंदर्य की नई व्याख्या प्रस्तुत करना है ताकि भारतीय समाज में ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व की नज़रों में स्त्री को समानता मिल सकें।

बिना संभावनाओं के कोई शोध कार्य नहीं किया जाता। उसमें गुणात्मक अंतर भले ही हो सकता है| मेरा शोध विषय समाजविज्ञान, साहित्य और मानवमूल्य के अंतरसंबंध पर आधारित है, जिसको लेकर अभी तक साहित्य में कोई शोध कार्य नहीं हुआ है, ऐसा कहना ठीक नहीं है।

किसी भी नवीन कार्य को करने के लिए हमें सहयोग तथा मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। जिसके सहारे वह अपने कार्य को मूर्त रूप देने में सफल हो पाता है। मेरा यह सौभाग्य है कि जवाहर लाल नेहरू विश्वविदयालय, नई दिल्ली से स्नातकोत्तर के पश्चात, महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय वर्धा में अध्ययन करने का अवसर मिला। जिसमें साहित्य विद्यापीठ (महाराष्ट्र), हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग,सत्र-2014-15 एम.फिल.उपाधि हेतु " **'अनदेखे अनजान पुल' में स्त्री (उपन्यास)-सौंदर्य के आयाम"** विषय पर मैंने शोध कार्य पूर्ण किया है। इस कार्य को पूर्ण करवाने में बहुत से लोंगो का सहयोग मिला है। यहाँ मैं उन सभी लोंगो का आभार व्यक्त करना चाहता हूँ।

हमारे जीवन में ऐसे अनेक पड़ाव आते हैं, जिसमें हमें अनेक लोगों से सहयोग प्राप्त होता हैं और इन्हीं लोगों के बीच कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं, जो हमें हमेशा आगे बढ़ने के लिए उत्साहित और प्रेरित करते रहते हैं। मेरे शोध कार्य को पूर्ण करने में मुझे कुछ ऐसे ही व्यक्ति मिले, जो हमेशा मेरा मार्गदर्शन एवं सहायता करते रहे, जिनके कारण मेरा यह शोधकार्य सम्पन्न हो सका। सर्वप्रथम मैं अपने विभागाध्यक्ष प्रो. सूरज

[1] अठारह उपन्यास,पृष्ठ- 206

पालीवाल के प्रति आभारी हूँ। शोध निर्देशक **डॉबीर पाल सिंह यादव.** साहित्य –सहायक प्रोफेसर) विद्यापीठ(हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभागके प्रति अत्यन्त आभारी हूँ। (जिन्होंने समय-समय पर मेरा मार्गदर्शन किया। साथ ही डॉउमेश. कुमार सिंह,सहायक प्रोफेसर, जिन्होंने प्रस्तुत शोध कार्य के विषय चुनाव से लेकर शोध-कार्य के सम्पन्न होने तक मुझे अनवरत मार्गदर्शन और सहयोग दिया, जिससे यह शोध कार्य अपने इस मूर्त रूप में साकार हो सकी।

मैं अपने माता पिता और दादा जी का अत्यन्त ऋणी हूँ।- मैं अपनी माताजी श्रीमती सरस्वती देवी,पिता श्री रामानन्द मंडल, सानुप लाल दास (दादाजी) बहन श्रीलेखा कुमारीअशोक कुमार , जिनकी प्रेरणा और भाभी के प्रति आभारी हूँ। (भाई)मंडल, स्नेह और आशीर्वचन से मैं आज शिक्षा के इस स्तर तक पहुँचा। जिसके लिए मैं उनका आजीवन आभारी रहूँगा। कहते हैं कि प्रेम में वह शक्ति होती है जो असंभव को भी संभव बना देता है, मेरी प्रेमिका दीपिका बेनर्जी(मूलरूप से बंगलादेशी), पिछले डेढ़ साल से सिर्फ इंतज़ार कर रही है, संभवतः यह प्रेम की पराकाष्ठा और परीक्षा दोनों है।

मित्रों के बिना जीवन अधूरा होता है वे हमें हमेशा हर कार्य में मदद करते हैं, ऐसे ही मेरे अभिन्न मित्र अशोक शाह(कर्मी.बैंक),रंजन यादव(बीजनेसमेन),अनिल कुमार यादव उत्तरप्रदेश),सिविल सेवा में कार्यरत(,शौर्यजीत सिंह शोधार्थी.डी.एच.पी),भारतीय भाषा केंद्र जे(.यू.एन. के प्रति आभारी हूँ।

सविता और शशिशोध छात्रा.फिल.एम),भारतीय भाषा केंद्र ,जेमें मेरे सहपाठी थे (.यू.एन., अब दूरी बढने के कारण अभिन्न दोस्त है, उन दोनों अभिन्न दोस्तों का विशेष रूप से आभारी हूँ।

सत्र -में आ (16-2015)ई भाषा अध्ययन की छात्रा गिरजा(.फिल.एम)बाई शर्मा का विशेष मानसिक सहयोग रहा, जिनके सहयोग के बिना यह शोध कार्य पूर्ण करना लगभग असंभव था । जिसे धन्यावाद देने के लिए मेरे पास शब्द नहीं है। मलयज सर सहायक पुस्तकालय अध्यक्ष),म .वि .हि .अ .गा.

वर्धा.वि) आदि पुस्तकालय के कर्मचारियों के सहयोग से यह कार्य पूर्ण हुआ है ।मेरे प्रिय सहपाठी सुरेश,देविदास, संतोष शिंदे,बबीता,बलदेव,नीतू,सुनीता,प्रदीप,जादूगर जी,उमरे गुरुजी,भावेश का विशेष रूप से आभारी हूँ।

अंत में, मैं उन सभी वरिष्ठ,कनिष्ठ एवं समकक्ष तथा ज्ञातअज्ञात विद्धानों और विचारकों के प्रति अपना - विनम्र अभिवादन करता हूँ, जिनकी पुस्तकों तथा आलेखों से प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से मुझे सहयोग मिला।

पहले अध्याय में मैंने सौंदर्य संबंधी भारतीय दृष्टिकोण और पाश्चात्य अवधारणा को ऐतिहासिक संदर्भों को 'अनदेखे अनजाने पुल' के मूल प्रश्न पर चर्चा की है।उपन्यास की नायिका 'निन्नी'के साथ घट रही मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, भौतिक यतनाओं के रेशों को जोड़ने का प्रयास किया है।

दूसरे अध्याय में मैंने अनदेखे अनजान पुल और सौंदर्य के आयाम पर चर्चा की है। हिंदी उपन्यास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और सौंदर्य की अवधारणा को संक्षिप्त परिचय देते हुए अनदेखे अनजाने पुल के मुख्य प्रश्न से जोड़ा है।

तीसरे अध्याय में मैंने सुन्दर-असुन्दर का द्वंद और अनदेखे अनजाने पुल चर्चा किया है। इसके साथ ही अनदेखे अनजान पुल में स्त्री और पितृसत्ता के अन्तः संबंध पर गहराई से चर्चा किया है।

कुल मिलाकर, इस शोध में 'निन्नी'जैसी लाखों स्त्रियों को समाज के द्वारा मिल रही आत्मायातना,आत्मपीड़ा और बिना किये की सजा को मूल प्रश्न के रूप में उद्घाटित किया गया है|

अनुक्रमणिका

अनुक्रमणिका

भूमिका **3 - 8**

1 . पहला अध्याय

1.1सौंदर्यशास्त्र का भारतीय दृष्टिकोण और 'अनदेखे अनजान पुल ' 12 - 20

1.2 सौंदर्यशास्त्र का पाश्चात्य सिद्धांत और 'अनदेखे अनजान पुल' 20 - 34

2. दूसरा अध्याय

2.1 'अनदेखे अनजान पुल' और सौंदर्य के आयाम 36 - 41

2.2 'अनदेखे अनजान पुल' और मानव मूल्य एवं स्त्री- सौंदर्य 42 - 47

3.तीसरा अध्याय

3 .1 सुंदर-असुंदर का द्वंद और 'अनदेखे अनजान पुल' 50 - 56

3.2 भूमंडलीकृत सौंदर्य , स्त्री एवं पितृसत्ता का जटिल अन्त: संबंध 56 - 60

उपसंहार 63 - 64

संदर्भ सूची 66 - 69

पहला अध्याय

1.1 सौंदर्यशास्त्र का भारतीय दृष्टिकोण और 'अनदेखे अनजाने पुल'

"**सौंदर्य**" क्या है ,इसका उत्तर देना कठिन है| सुंदर वस्तुओं के सामान्य धर्म को ही सौंदर्य कहा जाता है| किन्तु विषयगत सौंदर्य के विषय में ही "समानयधर्मता" का सिद्धांत ठीक बैठता है| विषयगत सौंदर्य पर पाश्चात्य सौंदर्य शास्त्र में अधिक विचार हुआ है | यूनानी मूर्तिकला में सौंदर्य का विकास अपनी चरमसीमा पर दिखाई पड़ता है ,इस बाह्य सौन्दर्य - दृष्टि की नाप-तोल भी योरोप में बहुत हुई है |

विषयगत सौन्दर्य चर्चा में सुंदर और उदात्त का भी भेद किया गया है | धार्मिकभाव मिश्रित भय उत्पन्न करने वाली विराट और विस्तृत वस्तुओं को "उदात्त " कहा गया है , "सुंदर" नहीं |

"वृन्त पर खिला हुआ पुष्प ,शरदनिशा में मुस्कराता हुआ चन्द्रमा और कामिनी का मुख आदि "सुंदर" कहे जाते हैं | "सुंदर" में "प्रियता" का भाव अधिक हैं | इसीलिए हमारे यहाँ "माधुर्य" गुण को सुंदर कलाओं की सृष्टि में अधिक महत्व दिया गया है | "सुंदर" वस्तु वह है जिसमें "रमणीयता" के साथ-साथ "माधुर्य" भी हो | 'रमणीयता' का अर्थ है क्षण – क्षण में उत्पन्न होने वाली नवीनता ,माधुर्य का अर्थ चित को द्रवित करने वाला आल्हाद है |[1]"

सुन्दरता के आयाम को लेकर राजेन्द्र यादव ने भारतीय सौन्दर्य चिंतन पर भी प्रश्न खड़े किये हैं | वे सुन्दरता को लेकर दो तरह की चीजें सोचते हैं | पहला कि सुन्दरता अनुपात का नाम है और दूसरा अंतर्मन का [2]सुंदर होना | और तीसरा बाह्य सौन्दर्य और अंतर्मन के सौन्दर्य का सम्मलित रूप | क्या सुन्दरता चन्द्रमा और कामिनी में ही हैं | क्या गलती है उस 'निन्नी'की जिसमें न चांदनी की चमक है और न ही कामिनी का काम भाव |

[1] समालोचक,पृष्ठ -5

आगे राजेन्द्र यादव कहते हैं – "**अनुपात सुन्दरता नहीं है, अनुपात के पीछे उद्भासित होने वाला प्राण ,प्रसन्न-उत्साह और आस्था ही सौन्दर्य है |"**[1]

इस उपन्यास के नायक 'दर्शन' जो एक चित्रकार है | राजेन्द्र यादव , 'दर्शन' के माध्यम से कहते हैं कि

"दूसरी चीज जो मेरी समझ में अभी तक नहींआई ,वह यह कि सुन्दरता क्या है? बहुत लोगों ने इस पर बहुत गम्भीर बातें कहीं हैं ,शास्त्र बनाए हैं| न मैंने वे पढ़ें हैं न यहाँ उनकी बात करूंगा | लेकिन जो प्रश्न मुझे मथता है , वह यह कि सुन्दरता अनुपात का नाम है या प्राणों के उल्लास का .....? एक सुडौल , सानुपातिक , नाक – नक्श , रंग-रूप वाले चहरे को सुंदर कहेंगे या सब मिलाकर जो प्रभाव मन पर छोड़ जाता है , उस प्रसन्न प्रभाव का नाम सुन्दरता है|" [2]

'सौंदर्यशास्त्र' भारतीय साहित्य के लिए एक नया शब्द है, वर्तमान युग से पूर्व भारतीय साहित्य में न तो इस शब्द का प्रयोग मिलता है और न इस नाम के किसी शास्त्र का उल्लेख ही,हिन्दी तथा कुछ अन्य भारतीय भाषाओं में इसका निर्माण ऐस्थेटिक्स के पर्याय के रूप में किया गया जिसका अर्थ है –इंद्रिय संवेदना का शास्त्र|

एक स्वतंत्र अनुशासन के रूप में भी सौंदर्य शास्त्र का इतिहास बहुत पुराना नहीं है| पाश्चात्य साहित्य में भी जहां लगभग दो सौ वर्षों से इस विषय का विधिवत पठन-पाठन हो रहा है,सौंदर्यशास्त्र संबंधी धारणाएँ आज तक सर्वथा स्पष्ट और निश्चित नहीं हो सकी है|

[1] अनदेखे अनजान पुल, पृष्ठ- 119

[2] अनदेखे अनजान पुल, पृष्ठ- 117

भारतीय साहित्य से अभिप्राय संस्कृत साहित्य से ही अभिप्राय है जो समस्त भारतीय भाषाओं का मूलाधार है| यद्यपि भारतीय साहित्य में स्वतंत्र अनुशासन के रूप में सौंदर्यशास्त्र का विकास नहीं हुआ फिर भी सौंदर्य चिंतन की प्रौढ़ परंपरा यहाँ आरंभ से मिलती है,वेदों और उपनिषदों में 'सौंदर्य' शब्द उपलब्ध नहीं होता,किन्तु सौंदर्य की अवधारणा और उसके वाचक-व्यंजक शब्दों तथा उक्तियों का अभाव नहीं है|

रामायण में सुंदर शब्द सामान्य रूप से प्रयुक्त हुआ है-उसके एक भाग का नाम सुंदर-कांड है। अभिजात संस्कृत साहित्य में इसका मुक्त प्रयोग है किन्तु पारिभाषिक अर्थ वैशिष्टय उसे प्राप्त नहीं है,सुंदर की अपेक्षा अन्य पर्याय शब्दों का प्रयोग काव्य तथा काव्यशास्त्र दोनों में ही अधिक मिलता है। संस्कृत साहित्य में सुंदर के निम्नोक्त पर्याय उपलब्ध है :-

सुंदरम रुचिरम चारु सुषम साधू शोभनम ,

कान्तम मनोरम रुचयम मनोज्ञम मंजु मंजुलम

अभीष्टे अभीप्सितम हृदयम दयितम वल्लभम प्रियम ।

इसके अतिरिक्त और भी शब्द है जो इसी अर्थ का वाचन करते हैं-जैसे ललित, सुष्ठ, काम्य कमनीय, रमणीय आदि **महाभारत** में भी 'सुंदर' शब्द के इसी प्रकार के अर्थिच्छायाओं वाले प्रयोग है, परन्तु वे भी वहाँ अत्यन्त विरल है।

कलाशास्त्र में भी प्रायः उपर्युक्त शब्द ही मिलते हैं। सौंदर्य के लिए रूप,शोभा,विछन्ति,वैचित्र्य आदि और सुंदर के लिए रम्य,रमणीय,मनोज्ञ,मनोहर,चित्र,चारु आदि। सुंदर शब्द का प्रयोग भी है,परन्तु उसे कोई पारिभाषिक वैशिष्ट्य प्राप्त नहीं है।

काव्यशास्त्र में **वामन,कुंतक**,आदि ने सौंदर्य का पारिभाषिक अर्थ में प्रयोग किया है,किन्तु सब मिलकर यहाँ भी उसकी अपेक्षा शोभा,रमणीयता,चारुता,आदि शब्दों का प्रचलन ही अधिक है। इसके अतिरिक्त भारतीय आचार्यों ने काव्य अथवा कला के सौंदर्य के लिए अपने कुछ विशिष्ट शास्त्रीय शब्दों की कल्पना भी की है। जैसे- रस या चमत्कार,ध्वनि,अलंकार,वक्रता आदि।

प्रयायों की इस समृद्ध परंपरा की वव्युत्पत्ति में सौंदर्य के विविध तत्वों एवं धर्मों की सार्थक व्यंजना निहित है,साथ ही इनके अर्थ विश्लेषण के द्वारा भारतीय सौंदर्यशास्त्र की मौलिक अवधारणाओं को सूत्रबद्ध किया जा सकता है|

संस्कृत कवियों का सौंदर्य वर्णन तो अनेक गौरव के अनुरूप अत्यन्त समृद्ध एवं परिष्कृत है ही उनका सौंदर्य विवेचन भी कारयित्री प्रतिभा के उन्मेष के कारण अत्यन्त मार्मिक बन गया है |

इसमें मूर्धन्य हैं –कालिदास,जो मूलतः सौंदर्य के कवि है,अपने महान ग्रंथ "अभिज्ञानशाकुंतलम" में वे कहते हैं –सौंदर्य का आकर्षण वास्तव में नैसर्गिक ही होता है-वह अलंकार पर निर्भर नहीं करता-**'किमी वहि मधुराणाम मण्ड्नम नाकृतीनाम'** सौंदर्य के प्रभाव के विषय में कालिदास का स्पष्ट मत है कि वह चेतना का परिष्कार या उन्नयन करता है |

यदुच्यते पार्वतिपापवृतिये न रूपमित्य व्यभिचारी तद्धच: (कुमार संभव)

बाणभट्ट की कृतियों में विविध वर्णों से भास्वर चित्रों का अपूर्व संकलन मिलता है|

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने अत्यन्त उच्छवासित वाणी में इन चित्रों की वर्णच्छटा का स्तवन किया है।

भवभूति मूलतः भावना के कलाकार है। करुण रस के महत्व के विषय में उनका यह प्रसिद्ध उद्धरण **'एको रसः करुण'** यह वास्तव में भाव -सौंदर्य का ही कीर्तन है,माघ ने सौंदर्य को चीर नवीन आकर्षण का पर्याय माना है। क्षणे-क्षणे यन्नवतामुर्पेति तदेव रूप रमणीयताया :-यह सूक्ति आज भी सौंदर्य के लक्षण –रूप में प्रचलित है।

पश्चिम में सौंदर्यशास्त्र को दर्शन के एक अंग-रूप में स्वीकार किया गया है। अतः वहाँ दार्शनिक चिंतन के अंतर्गत सौंदर्य चिंतन की परंपरा आरंभ से ही रही है।

प्लेटो ने तत्व चिंतन की परिधि में सौंदर्य का विवेचन भी किया है किन्तु भारतीय दर्शन के अंतर्गत इसका प्रावधान नहीं है : ब्रह्म,जीव,जगत,माया,मोक्ष आदि ही उसके प्रतिपाद्य विषय है –सौंदर्य नहीं।

भारतीय चिंतन प्रकृति तथामानव के सौंदर्य से कितना अधिक प्रभावित था,इसका प्रमाण वेद की ऋचाओं में स्थान-स्थान पर मिल जाते हैं। आत्म अथवा सत्य के सौंदर्य का साक्षात्कार भी उसने किया था जिसकी अभिव्यक्ति उपनिषद के आनंदवाद में हुई है,परंतु यह सब होने पर भी सौंदर्य भारतीय दर्शन का स्वतंत्र प्रतिपाद्य विषय नहीं रहा।

सौंदर्य का भावात्मक रूप आनंद ही चिंतन का केंद्र बिन्दु रहा। उसका वस्तु रूप नहीं। षडदर्पण की अपेक्षा भारतीय सौंदर्य चिंतन शेव दर्शन–विशेषकर प्रत्यभिज्ञा दर्शन का प्रभाव अधिक प्रत्यक्ष और व्यापक है। इसका एक प्रबल ऐतिहासिक कारण है कि भारतीय काव्यशास्त्र और कलाशास्त्र के प्रमुख आचार्यों की कर्मभूमि कश्मीर ही थी।

जहां प्रत्यभिज्ञादर्शन का उद्भव और विकास हुआ था और भारतीय कला दर्शन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण आचार्य अभिनव गुप्त प्रत्यभिज्ञादर्शन के व्याख्याताओं में अन्यतम थे। प्रत्यभिज्ञादर्शन के अनुसार शिव आत्मक्रीड़न की इच्छा से प्रेरित हो कर अपनी माया शक्ति से विश्व की रूप रचना करते हैं|

"पहले वह परियों से ,दैवी-शक्तियों से ,शिव-पार्वती से 'रूप' मांगने जाती थी ,दया मांगने जाती थी ; अब किसी से कुछ भी नहीं –कुछ भी नहीं मांगती | अब तो न वह सांवरी थी , न मीरा ,न शबरी थी ,न अहल्या ; बस दुखी हताश , थकी – मांदी ,टूटी – फूटी आत्मा थी , जो 'शांति' मांगती थी| "[1]

'प्रत्यभिज्ञादर्शन' के अनुसार इस संसार को भगवान 'शिव' ने बनाया है ,अर्थात हम उसी ईश्वर के सन्तान है,जिसने सम्पूर्ण सृष्टि का निर्माण किया है ,तो निन्नी भी उन्हीं की रचना है फिर दुनिया को रचने वाले की इस- सुंदर रचना को केवल रंग-रूप के आधार पर भेद-भाव करना,हीनदृष्टि से देखना,उसे लज्जित करना,मानवीयता के प्रति अपराध है | ....क्या उस भगवान ,ईश्वर का अपमान करना नहीं है? क्यों उसे इतना परेशान किया जाता है कि हर जगह से वह निराश होकर टूट जाती है और ईश्वर से शान्ति मांगती है | उसे जीवन से कुछ नहीं चाहिए ,क्योंकि उसे जीवन भर हर तरह की आत्मयातना दी गई | उसे जीवन में सिर्फ निराशा मिली है |

भारतीय कलाशास्त्र के ग्रन्थों में विविध कलाओं की प्रविधि –प्रक्रिया तथा रीति–रूढ़ियों का वर्णन विस्तार के साथ मिलता है, कलागत सौंदर्य का तत्व विवेचन अधिक नहीं है। सौंदर्यशास्त्र की दृष्टि से

[1] अनदेखे अनजान पुल ,पृष्ठ -99

सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य है कलाओं का अन्तः सम्बन्ध जिसका स्पस्ट उल्लेख सर्वप्रथम 'विष्णुधर्मोतरपुराण' में हुआ है।

इसमें संदेह नहीं कि भारतीय कलाओं के विकास में धार्मिक–प्रेरणा अत्यन्त बलवती रही है ,परंतु ऐहिक स्तर पर भी कला के महत्व की उपेक्षा नहीं की गई है। कला को नागर-जीवन का अलंकार माना गया है।

कुल मिलाकर भारतीय कलाशास्त्र का दृष्टिकोण रीतिबद्ध ही है जिसमें कलाकार के व्यक्तिगत रुचि संस्कार की अपेक्षा शास्त्र को ही प्रमाण माना गया है। काव्यशास्त्र का परवर्ती होने के कारण इसने रस, ध्वनि तथा अलंकार सिद्धांतों का प्रभाव मुक्त रूप में ग्रहण किया है।

अतः तत्व विवेचन के क्षेत्र में काव्यशास्त्र की अपेक्षा कोई नवीन अथवा मौलिक उदभावना इसमें नहीं है।

अंततः भारतीय सौंदर्य शास्त्र का मूल आधार तथा केंद्र है –काव्यशास्त्र । इसमें अन्य कलाओं का विवेचन तो प्रत्यक्ष रूप में नहीं है। अधिक से अधिक काव्य के उपजीव्य के रूप में अथवा कहीं कहीं दृष्टांत के रूप में उनका उल्लेख मात्र है,किन्तु शब्द अर्थ के माध्यम से व्यक्त सौंदर्य का जैसा परिपूर्ण एवं सूक्ष्म गहन तत्व विवेचन यहाँ हुआ है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।

रामचंद्रा शुक्ल ने सौंदर्यानुभूति का विवेचन करते हुए कहा है कि –

"कुछ रंग रूप की वस्तुएं ऐसी होती है जो हमारे मन में आते ही थोड़ी देर के लिए हमारी मानसिक सत्ता पर ऐसा अधिकार कर लेती है कि उसका ज्ञान ही हवा हो जाता है और हम उन वस्तुओं की भावना के रूप में परिणत हो जाते हैं। हमारी अन्ततः सत्ता की यही तदाकार परिणति सौंदर्य की अनुभूति है।"

कालिदास की सौंदर्य को लेकर मान्यता पाश्चात्य वस्तुनिष्ठ सौंदर्यशास्त्रियों से मेल खाती है। वस्तुनिष्ठ सौंदर्यशास्त्रियों का कहना है कि सौंदर्य वस्तु में है। दृष्टा के मन में नहीं अर्थात जो वस्तु सुंदर है वह वस्तु सर्वत्र सुंदर है।

कालिदास ने इसे कही कही स्वीकार किया है कि सौंदर्य रमणीय और सुंदर होता है उसे किसी प्रसाधन की आवश्यकता नहीं होती । इसलिए तो उन्हें रुक्ष वल्कल में सिमटी कोमलांगी अच्छी लगती है और पिच पिच सेवार में लिपटी कमलिनी भी आकर्षक लगती है।

इयमधिक मनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी ।

कीमिवही मधुराणा मंडन नाकृतीनाम।। (अभिज्ञान शाकुंतलम)

हिन्दी की कुछ रीतिकालीन कवियों की भी यह धारणा रही है कि सुंदर की रमणीयता न वर्द्यमान निकटता से घटती और निरंतर भोग से छिजती है बल्कि सुंदर वस्तु अपने अघट सौंदर्य के कारण सौंदर्यसृष्टा के लिए हर क्षण नवीन होती जाती है।

और श्री **हरिवंश सिंह शास्त्री** ने शांकर अद्वैत सिद्धांत के आधार पर सौंदर्य को पारिभाषित किया है –

स्थूल या सूक्ष्म जगत में आत्मा की अभिव्यक्ति ही सौंदर्य है।

भारतीय चिन्तकों ने भी सुंदर के साथ कुरूपता का वर्णन किया है उनके अनुसार सुंदर और कुरूप एक दूसरे के मूल्यों एवं सीमाओं का निर्धारण करते हैं । इसलिए **वाल्मीकि** ने राम के सौंदर्य को अधिक प्रभविष्णु और शूर्पणखा की कुरूपता को अधिक विकर्षक बनाने के लिए सौंदर्य व कुरूपता का समानान्तर वर्णन किया है –

सुमुखम दुर्मुखी राममम वृत्तमध्य महोदरी ।

विशालक्षम विरूपाक्षी सुकेशम ताम्रमूर्धजा॥

प्रीतिरूपम विरूपा सा सुस्वरम भैरवस्वरा।तरुणम दारुणम वृद्धा

1.2 सौंदर्यशास्त्र सम्बन्धी पाश्चात्य सिद्धांत और अनदेखे अनजान पुल

आदिमकाल से मानव के साथ-साथ संस्कृति सभ्यता का भी निरंतर विकास हुआ है। अग्नि का अविष्कार,पशुपालन,कृषि और वस्त्र धारण आदि आदिम सभ्यता के महत्वपूर्ण चरण रहे हैं । सांस्कृतिक विकास के इस लम्बे अंतराल में जो उदार मानसिक चेतना विकसित हुई है,उसका एक उल्लेखनीय पहलू सौंदर्य चेतना का विकास भी रहा है।

मध्य काल में आकर सभ्यता का यांत्रिक और आधुनिक काल में तकनीकी वैज्ञानिक विकास हुआ। सभी कालों में सौंदर्य चेतना के कुछ विशिष्ट लक्षण दिखाई देते हैं।

आदिकाल में मनुष्य के प्राकृतिक साहचर्य में सौंदर्य की नैसर्गिकता,स्वच्छंदता,और रहस्यमयता,परिलक्षित होती है और वही दूसरी ओर व्यक्तिवादी प्रजातंत्रात्मक जीवन से उसे वैयक्तिक या व्यक्तित्व सापेक्ष निजता और स्वतन्त्रता प्रदान की है।

इन युगों में सौंदर्यबोध क्रमशः अपने प्राकृतिक अलंकरण से नागरिक सौंदर्य की ओर अग्रसर रहा है। प्राकृतिक अलंकरण से नागरिक सौंदर्य की कहानी वस्तुतः निन्नी की भी है क्योंकि निन्नी का रंग का संबंध प्रकृति से है परंतु समाज उसे जिस निजता और कटुता के साथ देखता है। निजता और कटुता के लिए

निर्धारक कौन है? इसके निर्धारण के लिए निर्धारक की भूमिका किसकी है? इसकी पहचान करना आवश्यक है।

सौंदर्यशास्त्र पाश्चात्य दर्शन का एक भाग रहा है। इसलिए सौंदर्य के भारतीय दृष्टिकोण के बाद पाश्चात्य सिद्धांत को देखना- समझना भी आवश्यक हैं।

सौंदर्यशास्त्र हिंदी में ऐस्थेटिक का पर्याय के रूप में प्रचलित हुआ ,ऐस्थेटिक शब्द ग्रीक भाषा से लिया गया है| जिसका मूल रूप है – "atoQn Tikos"। बाद में यह ग्रीक शब्द ऐस्थेटिक्स बनकर उपस्थित हुआ। जिसका अर्थ होता है –'ऐंद्रिक सुख की चेतना'

पाश्चात्य साहित्य में पहले ऐस्थेटिक शब्द ही प्रचलित था ऐस्थेटिक्स नहीं। बामगार्टन ने भी ऐस्थेटिक शब्द का प्रयोग किया था। बहुत समय बाद इस शब्द का बहुबचन रूप ऐस्थेटिक्स प्रचलित हुआ।

सौंदर्यशास्त्र के अन्तर्गत प्रधानतः तीन प्रकार के सौंदर्य पर विचार किया जाता है –ऐंद्रिक सौंदर्य, विधानगत सौंदर्य और अभिव्यक्तिगत सौंदर्य। प्रथम अर्थ विकास के अनुसार ऐस्थेटिक्स वह शास्त्र है जिसका सम्बन्ध कला और प्रकृति में व्याप्त समग्र सुंदर और उदात्त से है।

सौंदर्यशास्त्र के विश्लेषण से उसके स्वरूप के सम्बन्ध में तीन दृष्टिकोण मिलते हैं :

1 वस्तुनिष्ठ

2.व्यक्तिनिष्ठ

3.सापेक्षतावादी संबंधनिष्ठ।

सौंदर्य को वस्तुगत मानने वाले **प्लेटो,अरस्तू, बर्क, हिगेल, लेस्सिंग,क्रोचे** आदि अधिकांश सौंदर्यशास्त्रियों के दृष्टिकोण आध्यात्मिक है। वे सौंदर्य को ईश्वरीय विभूति मानते हैं। जिसका कुछ अंश या छाया वस्तु में प्रतिफलित होती है।

कुछ दार्शनिक सौंदर्य को अन्ततः आध्यात्मिक मानते हुए भी उसे वस्तु के रूप में, भाव का प्रकाशन मानते हैं। जैसे– सुकरात,हिगेल आदि ; तो कुछ सौंदर्य का संबंध रूप से मानते है। रूपगत सौंदर्य का मूल स्रोत प्रकृति है।और इन सबसे भिन्न सौंदर्य को वस्तुनिष्ठ और रूपगत मानने वाले सौंदर्य के व्याख्याता क्रोचे है।

आधुनिक काल में सौंदर्यशास्त्र का अंग न होने पर भी सौंदर्य चिंतन को विशेष प्रभावित करने वाली तीन विचारधाराएँ हैं-**1. मार्क्सवादी**

2. मनोवैज्ञानिक

3. वैज्ञानिक।

1**. मार्क्सवाद** सौंदर्य को सामाजिक चेतना से संबद्ध मानता है। इस धारा के मुख्य विचारक है :- लेलिन,माओत्से तुंग, प्लेखानोव,मैक्सिम गोर्की,जार्ज लुकाज और चीनी साहित्यकार एवं चिंतक लू शुन आदि हैं।

इस प्रकार मार्क्सवादी सौंदर्य चिंतन के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि मार्क्सवादी सौंदर्य चिंतकों ने सौंदर्य जीवन संघर्ष में ढूंढा है और कला को संघर्ष का औजार माना है।अब सवाल उठता है कि क्या सुंदर है? और इसके सुंदर लगने की प्रक्रिया क्या है? इस प्रश्न का संबंध बहुत कुछ वस्तु के संदर्भ,हमारे सहजज्ञान स्थिति ,धारणा और प्रयोजन से है।

किसी वस्तु के रूपवान सौंदर्य का साक्षात करते समय उस वस्तु का संदर्भ ,परिवेश और उस समय तक का हमारे विकसित सहजज्ञान का स्तर क्या है? न केवल इतना बल्कि उनके साक्षात करने की पृष्ठभूमि में हमारा विचार और प्रयोजन भी सक्रिय होते हैं।

2. मनोविज्ञान मन के अन्तः चेतना से सौंदर्य का सम्बन्ध जोड़ता है। सौंदर्य का व्यक्त रूप जो इंद्रिय-गोचर होने पर भी उसके मूल प्रेरणास्रोत अंतश्चेतन के कुछ विशेष धर्म है।

फ्रायड के अनुसार –"अंतःश्चेतना का काम चेतन मन में आकर प्रतिकात्मक,उदात्तीकृत और रूपान्तरण की प्रक्रियाओं के द्वारा सौंदर्य का सृजन करना है।"[1]

अडलर के अनुसार– व्यक्तिगत अंतःश्चेतना से ही नहीं जातिगत या सामूहिक मानव जाति के लम्बे इतिहास में भी अनेक प्रकार के सौंदर्य संस्कार मानव-मन में संचित रहते हैं । अडलर मनुष्य के व्यक्तित्व को अंतर्मुखी–बहिर्मुखी वर्गों में बांटकर दोनों को सहज-बोधात्मक,भावनाशील और क्रियाशील उपवर्गों में बांटते हैं।

सौंदर्यशास्त्र को लेकर कई विचारकों में मतभेद हैं, परन्तु फिर भी कुछ विचारकों के अनुसार –सौंदर्य एक विचार या अभिप्रेत है जिसका अभिधारण केवल मनुष्य के मस्तिष्क में होता है, इसलिए कोई एक वस्तु किसी के लिए सुंदर तो किसी के लिए असुंदर हो जाती है,किसी के लिए कुछ समय के बाद असुंदर हो जाती है।

सौंदर्य मनुष्य के सामाजिक जीवन एवं ऐतिहासिक दशा की उपज है और मानवीय समाज के बिना सौंदर्य की कल्पना तक नहीं की जा सकती| और सौंदर्य के इस सामाजिक चरित्र का उदघाटन मनुष्य ही करता है। वह वस्तु के प्रति आत्मगत होकर कामना से उसे संबद्ध करता हुआ उसका सुखद अनुभव करता है।

[1] डॉ.कुमार विमल,सौंदर्यशास्त्र के तत्व,पृष्ठ-111

इस स्थापना के द्वारा कई खामियाँ दूर हो जाती है। कहा जा सकता है कि सौंदर्य का अस्तित्व मानव समाज से स्वतंत्र होकर नहीं है।

सौंदर्य में सामाजिक विकास के प्रमुख लक्षण संघटित रहते है एवं समाज में मनुष्य के रोज़मर्रा के नानाविध अस्तित्व भी सौंदर्य के बहिर्गत सामाजिक चरित्र तथा आत्मगत प्रतिबोध की रचना करते हैं।

ग्रीक तथा पश्चिमी सौंदर्यशास्त्र के प्रमुख दार्शनिक दृष्टियों का मूलचक्र से किसी न किसी प्रमुख घटक ज्ञान, संवेदना (बोध) ,अनुभव, अभिव्यंजना,सत्ता आदि से गहरा रिश्ता रहा है।

अंग्रेज़ चिंतक एडमंड बर्क (1719-1797**) लांजायनस तथा कांट** के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी है। सन 1756 ई. में उन्होंने "**सौंदर्य और उदात्त सम्बन्धी हमारे छानबीन**" नामक ग्रंथ लिखकर एक महान परंपरा की शुरुआत की|

बर्क ने सौंदर्य को राग (पैशन)एवं संवेदना(सेंसशन) से संबद्ध किया। उन्होंने माना कि जिसप्रकार बर्फ से ठंड की या आग से गर्मी की संवेदना होती है,उसी प्रकार सौंदर्य से प्रेम की अर्थात सुखद संवेदना ही पायी जाती है।

दूसरी बात उन्होंने कही कि सौंदर्य और उदात्त दोनों मानव जाति की पहली सीमा है।

तीसरी बात उन्होंने कही कि सौंदर्य और उदात्ता दोनों मानव जाति की आत्म- संरक्षण नामक सामूहिक मूल प्रवृति का परिणाम है। इस प्रकार सौंदर्य और उदात्त सौंदर्य-तत्व के दो खण्ड है–दूसरे ये सामूहिक है ,तीसरे ये तदनुरूप सौंदर्य सामाजिक संस्कार में है।

इनके दो उपखंड है। जिनमें बहुधा सुखद राग है, दूसरा उदात्त से संबद्ध | जिसमें पीड़ा और खतरे तथा प्रसूत राग है, लेकिन सामाजिक मूल प्रवृतियों तथा तदनुरूप सौंदर्य प्रभेदों की स्थिति मानना एडमंड बर्क

की सीमा है,सौंदर्य को राग और संवेदना से संबद्ध करने मे भी बर्क की सीमा उजागर होती है क्योंकि बर्फ और अग्नि का भौतिक अस्तित्व समाप्त होते ही ठंड और ताप की संवेदना लुप्त हो जाती है,लेकिन कलाकृति और सौंदर्यात्मक उत्तेजना के हटने पर भी अभिरुचि या कला संवेदना बरकरार रहती है,ऐसा प्रतीत होता है कि सौंदर्य को शुद्ध रूप से मात्र आत्मगत अनुभव न मानकर उसे बाह्य वस्तु से भी संबद्ध करने के लिए उन्होंने इस अनुपयुक्त रूपक को चुना है।

जोहान जांशिम विंकेलमान (1717-1789) ने बर्लिन निवासी बामगार्टन की तुलना में यूनानी और रोमन दुनिया की संस्कृति और शिल्प कला में अपने को बेतहाशा ढालकर सौन्दर्यबोधशास्त्र को पुनः प्लेटोवादी आदर्शों की ओर मोड़ने की कोशिश किया है।

बामगार्टन ने संवेग ज्ञान की पूर्णता में सौंदर्य माना तो वेंकिलमान ने भौतिक माध्यम की पूर्णता में,बामगार्टन ने इसी वास्तविक जगत को परिपूर्ण तथा आदर्श माना तो विंकेलमन ने केवल ईश्वर को पूर्ण माना उन्होंने सौंदर्य को दैवी घोषित किया । मानव शरीर में सर्वोच्च सौंदर्य की उपस्थिति मानकर विंकेलमान ने सौंदर्य को रूप आश्रित बना दिया। उन्होंने रेखाओं और सतहों को सर्वाधिक महत्व दिया; एक वर्तुल (एनालिटिकल) रेखा को सौंदर्य की उत्तम रेखा माना है। उन्होंने संगति (हार्मनी)और डिजाइन को मानव शरीर संभूत सौंदर्य के चरम रूपात्मक मूल्य माने है। सौंदर्यनुभाव को उन्होंने ईश्वर के साथ संबद्ध किया,पूर्णता की प्रतिष्ठा मानव शरीर में की, रुचि के स्थान पर रूपाश्रित छवि प्रतिष्ठित की जहां इंद्रिय बोधों के प्रति काफी उदासीनता दिखाई गई।

उनका अगला अंतर्विरोध तब स्पष्ट होता है जब वे दैवी आकृति और मानव आकृति के बीच समझोता करते समय पुरुष आकृति को नारी आकृति से पूर्ण सौंदर्यशाली मानते हैं। इसका कोई कारण मालूम नहीं है। परंतु देखा जाए तो मनुष्य तो स्त्री के नख-शिख में दोनों की ही आशंसा करता है,नारी शोभा की अपेक्षाकृत अधिक आशंसा करता है और उसकी यह आशंसा केवल शरीर की ही नहीं,अपितु चरित्र

की भी होती है। जाहिर है कि अभिव्यंजना क्षेत्र में वेंकिलमान ने शिल्प कला का मांसल और पुरुष मानवता का सीमित क्षेत्र ग्रहण किया है।

सुंदरता को लेकर निन्नी मानती है कि सुंदरता सिर्फ बाहर दिखने वाली चीज नहीं है।वह अभी तक पढ़ी थी कि गुणी होना ही सौंदर्य है। पर व्यक्तिक, पारिवारिक और सामाजिक तिरस्कार ने उसे मानसिक रूप बेघर कर दिया है। जिसके कारण वह मानसिक रूप से विक्षिप्त हो जाती है। उसके घर में उसके पिता पुरुष होते हुए भी निन्नी की पीड़ा समझते हैं और सबसे ज्यादा प्यार भी करते हैं। राजेन्द्र यादव निन्नी के पिता के बारे में कहते हैं –" शायद वे निन्नी के 'कुरूपता' के लिए कहीं अपने को जिम्मेदार मानते थे और अक्सर सामने पड़ने से कतराते थे .....!"[1]

क्रोचे (इटलीवासी बेनदेत्तों क्रोचे,1866-1952) दक्षिणपंथी हिंगेलियान परंपरा में आते हैं, जिन्होंने अरस्तू से ही अपने शिक्षण का अनुकरण तथा विवेचन किया है। उन्होंने कला सिद्धांत की अपनी एक महान आधुनिक संहिता **ऐस्थेटिका** (1900) द्वारा अभिव्यंजनवाद का विकास किया जो उनके आत्मा चैतन्य के दर्शन के तीनों अंगो (ऐस्थेटिका,लाजिका,प्रेटिका) में से एक है।

क्रोचे ने अन्य दार्शनिकों से भिन्न सौंदर्य का अभिव्यंजना के साथ समावेश और विश्लेषण किया है। सर्वप्रथम क्रोचे ने ही इतनी स्पष्टता के साथ सौंदर्यशास्त्र के अंतर्गत अन्तः संस्कारण (फिलिंग)या अभिव्यक्ति की परिकल्पना रखी।

सौंदर्यानुभूति भावना के प्रभाव का पर्याय मानी जाती है। भावना अपने में एक सरल और प्राथमिक मानसिक प्रक्रिया है जिसका विश्लेषण नहीं हो सकता। वास्तव में यह आत्मजगत या अंतर्मुखी होने के

[1] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-101

नाते व्यक्ति को अपनी मानसिक स्थिति का ज्ञान करती है। यह संवेदना की तरह किसी इंद्रिय विशेष में न होकर संपूर्ण शरीर में व्याप्त होती है और एक समय में इनमे से एक ही की अनुभूति हो सकती है।

क्रोचे के अनुसार इन भावनाओं या अन्तः संस्कारों (फीलिंग) की सफल अभिव्यक्ति या अभिव्यंजना जिसमे परिपुष्ट हो कर सुख मिले अर्थात यह व्यावहारिक व्यापार के अंतर्गत आ जाए तो सौंदर्य कहलाती है।

क्रोचे सौंदर्य को पारिभाषित करते हुए कहते है कि यह सफल अभिव्यंजना या अभिव्यंजना से भी अधिक कुछ नहीं है क्योंकि क्रोचे के अनुसार असफल अभिव्यंजना,अभिव्यंजना नहीं रह जाती,इससे दूसरा नतीजा यह निकलता है कि असफल अभिव्यंजना असौंदर्य या कुरूपता है। उनके अनुसार सौंदर्य में श्रेणियाँ (अधिक सुंदर ,उससे अधिक ,कम ,उससे कम)नहीं होती,किन्तु कुरूपता में होती है; सौंदर्य एकता और असौंदर्य अनेकता।

क्रोचे सौंदर्य अर्थात सफल अभिव्यंजना एवं सुंदर वस्तु कलाकृति के बीच भेद करते है। सुंदर वस्तु हमारी स्मृतियों की आत्मचेतन ऊर्जा भौतिक तथ्यों की सहायता से मनुष्यों के द्वारा संरक्षित होती है। अतः हम इन्हें भौतिक सौंदर्य या सुंदर वस्तु कह सकते हैं।

भौतिक सौंदर्य के दो भेद हैं –

1.प्राकृतिक सौंदर्य

2. कृतिम सौंदर्य

1.**प्राकृतिक सौंदर्य** के संबंध में क्रोचे का कहना है कि प्राकृतिक सौंदर्य सहज प्राप्त नहीं होता इसका अनुसंधान किया जाता है और इसे वे ही खोज सकते है जो कल्पना और रुचियों वाले हो। प्राकृतिक सौंदर्य उद्दीपन मात्र है। कल्पना के अभाव में प्रकृति सुंदर प्रतीत नहीं होती है।

2. कृत्रिम सौंदर्य मनुष्य निर्मित है ,जैसे –मूर्ति,कविता,चित्र आदि ।

मिश्रित सौंदर्य में दोनों तरह के सौंदर्य का समावेश है।

तीन तरह के भौतिक सौंदर्य को स्वीकार करने के बाद भी क्रोचे ने मानव शरीर के सौंदर्य की ग्रीक तथा क्लासिकल परिकल्पना का प्रबल खंडन किया । वे कहते हैं कि हम मानव शरीर को ही सुंदर क्यों माने ? यदि मानव ही सुंदर है तो पुरुष या स्त्री या उभयलिंगी में से किसे सुंदर माने ?किस जाति को सुंदर माने? यदि किसी विशेष जाति को मानते है तो उसकी कौन-सी उपजाति सुंदर होगी ? किस-किस उम्र वाले मानव शरीर को सुंदर माने –वृद्ध,युवक,अथवा शिशु को? फिर मानव शरीर को किस मुद्रा में सुंदर मानें? अतः क्रोचे के अनुसार मानव शरीर के सौंदर्य की कोई भी कसौटी पेश नहीं की जा सकती है।

ऐस्थेटिक्स अन्तः संस्कार सांगोपांग अंतर्मुखी है। अतः संस्करण(इंप्रेशन) की पहली स्थिति में भौतिक वस्तु या मूर्त वस्तु के उपस्थित होने पर वासना स्वरूप प्रभाव जम जाता है। किसी विशेष अन्तः दीप्ति के उद्दीपन के कारण यह प्रभाव या भावना ही अभिव्यंजना (एक्स्प्रेशन) में बदल जाती है,यहाँ सौंदर्य प्रकट होता है और यह दूसरी स्थिति है।

तीसरी स्थिति में बाध्य अभिव्यक्ति शुरू होती है, इस दशा में सुख की प्राप्ति होती है जो कि सफल अभिव्यंजना या आत्मपरिपुष्टि के कारण होता है| चौथी स्थिति में ऐस्थेटिक तथा भौतिक तथ्य में अभिव्यक्त और रूपांतरित हो जाता है, अर्थात वह कलाकृति में स्थित हो जाता है यह स्थिति अनूदित

होने वाली भौतिक सौंदर्य की है। अतः यहा चरम मूल्य केवल अभिव्यंजना (सौंदर्य) है - न सत्य,न शिव, न अर्थ, न उपदेश आदि किसी मूल्य से कुछ लेना - देना नहीं है।

डार्विन : डार्विन ने सौंदर्य की प्रकृति या सौंदर्यबोध के विषय में विवेचन न करके सौंदर्योद्गम की छानबीन करते हुए सिध्द किया है कि पशु-पक्षियों के जीवन में सौंदर्य एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। उन्होंने अपने "द डिसेन्ट ऑफ मैन सेलेक्शन इन रिलेशन टू सेक्स" नामक ग्रंथ में कहा है कि सौंदर्यबोध के द्वारा विशेषतया मनुष्य की ही क्षमता घोषित की जाती है। लेकिन जब हम नर पक्षियों को जानबूझ कर अपने सुहावने रंगो और शिखाचूड़ों को मादा पक्षियों के सामने प्रदर्शित करते हुए तथा इस प्रकार की सज्जा से वंचित पक्षियों को इस कार्य से विहीन पाते हैं तो यह संदेह करना असंभव हो जाता है कि मादाएँ अपने नरों के सौंदर्य की प्रशंसा करती है।अगर मादा पक्षी अपने नर साथियों के सुंदर रंगों,अलंकारों और आकुलताओं को बेकार समझती होती तो भी यह स्वीकार करना नामुमकिन है।

इसे हम निम्नलिखित बातों से समझ सकते हैं ।

मादा पक्षी अपने नर साथियों के सौंदर्य की प्रशंसा करते हैं अर्थात नीची शृंखला के पशु-पक्षी भी मनुष्य की तरह ही सौंदर्यात्मक रूचियां रखते हैं।

पशु-पक्षियों के नैसर्गिक यौन रंगो तथा शरीर के कृत्रिम आभूषणों के बीच समानता नहीं है|

मनुष्य एवं पशुओं में सौंदर्यबोध का उद्गम एक सा है।

'डार्विन' मनोवैज्ञानिक विचार से विमुख होकर जनन शास्त्रीय आदिम संस्कारों की ओर उन्मुख होते हैं । **'गिलबट'** और **'कुन्ह'** इसे '**हम्बोल्ट**' के सिद्धांत की परोक्ष पुष्टि मानते हुए कहते हैं कि प्रकृति ने मनुष्य को जो भी चारित्र प्रदान किया है वह उसकी प्रशंसा और बहुधा अतिरंजना करता है। साक्ष्य है कि छोटी आंखे मछली की तरह, भौह धनुष की तरह और ग्रीवा हंस की तरह कल्पित करके मनुष्य ने यही

किया है।

'चाल्स डार्विन' ने भी मानवेतर प्राणियों की मानसिक शक्ति के विवेचन क्रम में यह स्वीकार किया है कि मानवेतर प्राणियों में भी सौंदर्य-चेतना रहती है किन्तु डार्विन ने मानवेतर प्राणियों के सौंदर्य चेतना के संबंध में जितनी बातें कही हैं वे मुख्यतः यौन संवेदना पर निर्भर है।

अतः हम इतना ही मान सकते हैं कि मानवेतर प्राणियों में भी इंद्रियग्राही रूप अथवा ध्वनि के यौन अभिशंसन की क्षमता रहती है ,किन्तु मनुष्य सांस्कृतिकता एवं सामाजिकता से अद्भुत उन्नयन के द्वारा सौंदर्य चेतना को जो अद्वितीय और उन्मेष - पूर्ण धरातल दिया है उसका मानवेतर श्रेणियों में नितांत अभाव है। इस तरह डार्विन ने सौंदर्य चेतना को यौन संवेदना तक सीमित करते हुए ही मानवेतर प्राणी जगत संबंधी अपनी मान्यता प्रस्तुत की है। अनेक पर्यवेक्षणों के आधार पर इन्होंने निष्कर्ष निकाला कि असंस्कृत मनुष्य की सौंदर्य चेतना जिस धरातल की होगी वैसी ही सौंदर्य चेतना प्रायः सभी मानवेतर प्राणियों में एक जैव संस्कार के रूप में विद्यमान रहती है।

जी.टी.फेनकर ने प्रायोगिक सौंदर्यशास्त्र (एक्सपेरिमेंटल ऐस्थेटिक्स) का प्रारम्भ किया है। किन्तु इसका व्यवस्थित रूप बाद में आया। प्रायोगिक मनोवैज्ञान के अनुसार कभी-कभी सुंदर रूचि पर निर्भर होता है। अर्थात कौन - सी वस्तु सुंदर है यह देखने वाले की रूचि पर निर्भर करता है।

इसे हम दो बातों से समझ सकते हैं। पहली बात यह है कि किसी वस्तु के प्रति व्यक्ति की प्रत्यर्थता (response) पर निर्भर करती है इसलिए एक ही वस्तु के प्रति विभिन्न आसंग,संगति वातावरण में पले हुए व्यक्तियों की प्रतिक्रिया भी भिन्न होती है,व्यक्ति की यह प्रतिक्रिया ही व्यक्ति के प्रति आकर्षण अथवा सौंदर्यानुभूति पैदा करती है।

सौन्दर्य सम्बन्धी पाश्चात्य सिद्धांत के अंतर्गत मार्क्सवादी ,मनोवैज्ञानिक ,प्रायोगिक विज्ञान,तीनों स्तरों पर 'अनदेखे अनजान पुल' में राजेन्द्र यादव ने प्रश्न उठाया है| सामाजिक मनोविज्ञान 'निन्नी'पर इस तरह हावी है कि वह मानसिक रूप से बीमार हो चुकी है|

उपन्यासकार वैज्ञानिकों पर प्रश्न करते हैं–"अक्सर उसे वैज्ञानिकों पर गुस्सा भी आता |आसमान में उड़ने के लिए स्पुतनिक और रॉकेट बनाने में ये लोग इतना धन और शक्ति खर्च कर रहे हैं ,इन्हें इतना ख्याल नहीं है कि धरती की लाखों समस्याएं अभी यों ही अनछुई पड़ी है? क्या फ़ायदा हवा में उड़ने से ,जब इस जरा सी बीमारी का हल ये लोग नहीं निकाल पाते ?"[1]

सौन्दर्य संबंधी पाश्चात्य सिद्धांत के अनुरूप ,पश्चिमी के देश भी नहीं है। उन कथाकथित विकसित देशों में भी काले लोगों को पसंद नहीं किया जाता था और आंशिक रूप से आज के दौर में भी नापसंद का शिकार होना पड़ता है और बहुत ही निम्न स्तर का समझा जाता है। अमेरिका जैसे देश जो दुनिया के देशो को अपने इशारे में चलाता है। अमेरिका की एक घटना निम्न है जिससे ये समझा जाएगा कि अमेरिका जैसे देशों में भी ये वीभत्स घटनाए आम है।

डॉ.कुसुम त्रिपाठी के अनुसार –"बात एक दिसम्बर, 1950 की है, अमेरिका के मोटागो मैरी शहर की 'रोजा पार्क' एक पोशाक कर्मचारी के साथ-साथ मजदूर नेता भी थी। वे काम से लौट रही थी, बस में बैठने की जगह देखकर वे बैठ गई । उस दिन रोजा काफी थकी हुई थी। उन दिनों अमेरिका में यह चलन था कि बस में यदि कोई स्वेत चढ़े तो काले लोगों को उठ जाना चाहिए और उसे अपनी सीट देनी पड़ती थी। 'रोजा पार्क' थकावट के मारे पैरो में दर्द के कारण बस की सीट पर बैठी रह गई । स्वेत लोगों ने इसका विरोध किया । बस रुक गई,उन्होंने रोजा को बस से उतरने के लिए कहा, रोजा ने प्रश्न किया,जब मैंने भी उतना ही किराया दिया है जितना कि कोई स्वेत देता है, तो फिर मुझे सीट पर बैठने का अधिकार क्यों

[1] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-87

नहीं है? पर स्वेत लोगों ने रोजा की एक न सुनी,उन्हें जबरन बस से उतार दिया और पुलिस हिरासत में दे दिया। रोजा को जेल में रहना पड़ा कारण, वे अस्वेत थी इस कारण वे बस की सीट पर नहीं बैठ सकती थी। हालाँकि स्वेत के बराबर ही उन्होंने टिकिट के पैसे भरे थे। अस्वेत लोगों को जब इस बात का पता चला तो उन्होंने महात्मा गांधी की तरह अहिंसक तरीके से सत्याग्रह का मार्ग चुना और निर्णय लिया कि जब तक रोजा को जेल से रिहा नहीं किया जाएगा वे बस में नहीं चढ़ेंगे। अस्वेत लोगों के बहिष्कार के कारण बस कम्पनियों को भारी नुकसान होने लगा। मोटागों मैरी के अस्वेत लोगों ने 381 दिनों तक बहिष्कार चालू रखा। 'रोजा पार्क' पर मुकदमा चला,उन्हें दंड भरने के लिए कहा गया। उनके वकील ने उन्हें किसी भी तरह का दंड भरने से मना कर दिया और कहा-हम अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाएंगे। सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि किसी भी पब्लिक ट्रांसपोर्ट सर्विस में किसी के साथ भी अलगाव नहीं बरता जा सकता। न्यायालय के अनुसार इस तरह का भेदभाव देश के कानून के खिलाफ हैं। कानूनन सभी अमेरिका के नागरिक समान है ,स्वेत-अस्वेत। फिर क्या था 'रोजा पार्क' ने अस्वेत लोगों के मानवाधिकार के लिए जंग छेड़ दी। अमेरिका में बसे लाखों अस्वेत लोगों के दिमाग में रोजा पार्क बस गई।[1]"

इसप्रकार हम देखते है कि मानव–सभ्यता के निरंतर विकासक्रम के दौरान विभिन्न युगों के तदनुकूल ज्ञान-विज्ञान दर्शन की विविध विचारधाराओं ने सौंदर्य संबंधी अनुभूति को देखा समझा और विश्लेषित किया और इसप्रकार सौदर्यबोधशास्त्र की अनेकागामी मीमांसा ही इस भाग में पश्चिम के महान दार्शनशास्त्री प्लेटो से लेकर फाकनर तक के युग को समावेशित करने की प्रयास किया गया,सौंदर्य की समझ विकसित करने में निश्चित ही इनका योगदान अतुलनीय रहा है।

[1] त्रिपाठी कुसुम,स्त्री अस्मिता के सौ साल,पृष्ट-172

सारांश यह है कि कुरूपता के प्रति शिथिलता हमारी सौंदर्य चेतना के लिए अशोभन और न कुरूपता के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया हमारी सौंदर्य चेतना के लिए शुभंकर है।

भारतीय विचारकों में अभिनव गुप्त ने सौंदर्यानुभूति को सार्वभौम माना है। इनके अनुसार सौंदर्यानुभूति देश, काल, परिस्थिति, कार्य कारण से परे है अतः सौंदर्यानुभूति के क्षणों में भावक दैनन्दिन जीवन कि सांसारिकता से कुछ समय के लिए ऊपर उठ जाता है। अर्थात अभिनव गुप्त ने इस बात पर बल दिया है कि सौंदर्यानुभूति की अवस्था में मनुष्य काल कार्य नियम के द्वारा संचालित से पृथक हो जाता है। यह अलगाव जितना सशक्त होता है सौंदर्यानुभूति उतनी ही विशिष्ट होती है।

अतः भारतीय काव्यशास्त्र में रस,अलंकार,रीति,ध्वनि और वक्रोक्ति आदि सिद्धांतों का विकास सौंदर्यतत्व की ही अनवरत खोज का परिणाम है। इन सभी के माध्यम से भारतीय मनीषियों ने सौंदर्य के स्वरूप,मूल तत्व, आस्वाद,प्रयोजन और मूल्य,माध्यम उपकरण आदि का तलस्पर्शी विश्लेषण किया है। इसमें संदेह नहीं है कि काव्यशास्त्र का सौंदर्य विवेचन अर्थ के माध्यम तक ही सीमित है,फिर भी इसकी मौलिक प्रतिपत्तियाँ इतनी सार्वभौम है कि अन्य कलाओं के लिए भी वे समान रूप से उपयोगी और सार्थक हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. **शर्मा,रामविलास .(1958).समालोचक.नई दिल्ली.अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.)लि.पृष्ठ -5**
2. **यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन. पृष्ठ-119**
3. **यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन. पृष्ठ-117**

4. **यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन .पृष्ठ - 99**
5. कुमार ,विमल.(1998). सौंदर्य के तत्व. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन .**पृष्ठ-111**
6. **यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन .पृष्ठ-87**
7. **त्रिपाठी, कुसुम.(2010).स्त्री अस्मिता के सौ साल.मुम्बई.संस्कार साहित्य-माला प्रकाशन .पृष्ट-172**

दूसरा अध्याय

2.1 अनदेखे अनजान पुल और सौंदर्य के आयाम

हिंदी उपन्यास के इतिहास में अधिकांश साहित्यकार समाज के अन्य समस्याओं पर साहित्य के विभिन्न विधाओं में, सामाजिक दायित्व समझकर लेखन का कार्य किया है लेकिन स्त्री-सौंदर्य या स्त्री-कुरूपता पर बहुत ही कम लेखकों का ध्यान आकृष्ट हुआ है। राजेन्द्र यादव या इनके जैसे कई लेखक हैं जिन्होंने स्त्री-सौंदर्य या स्त्री -कुरूपता को विषय बनाकर साहित्यिक लेखन का कार्य किया है।

"अनदेखे अनजाने पुल" उपन्यास में स्त्री-सौंदर्य के जिस स्वरूप पर प्रश्न उठाया गया है। वह सिर्फ 'निन्नी'के लिए नहीं है बल्कि सामाजिक अवधारनाओं पर सवाल है। जिसके वजह से 'निन्नी'अपने-आप को अपराधी मान बैठती है। जब कि सर्वसाधारण को यह पता है कि 'निन्नी'की इसमें कोई गलती नहीं है।'निन्नी'अपने आप से, समाज से, कई बार प्रश्न करती है, खुल कर नहीं, अपने मन में ही,पर जीवन भर उसे उत्तर नहीं मिल पाता। क्योंकि सामाजिक मूल्यों की जटिलता इस प्रकार है कि इसे समझना टेढ़ी खीर है। जो भारतीय मूल्य बने हैं,और सुंदरता की जो अवधारणा हमारे मन-मस्तिष्क में बने हैं वह एक दिन का प्रतिफल नहीं है। ये हजारों सालों से बनते आ रहे हैं और उसमें समय के साथ बदलाव भी होते रहते हैं। 'निन्नी'की पीड़ा को राजेन्द्र यादव ने इसप्रकार व्यक्त किया है- **"तनाव भरी स्थिति में उसे गुसलखाने में अपना चेहरा देखना याद आया,चेहरा याद आया और फिर इधर-उधर से आँसू लुढ़क पड़े .....पता नहीं,भगवान ने उसके साथ कौन सा बदला लिया है।"**[1]

एक तो कुरूप,दूसरा घर से कॉलेज और कॉलेज से घर, इसके अलावा कही जाना नहीं होता था। भारतीय समाज की स्त्रियों को जिस तरह के नियम-कायदे बचपन से घोल- घोल कर पिलाये जाते हैं, कि तुम बाहर नहीं निकलो, लड़कों के साथ मत खेलो, कारण सिर्फ इतना है , कि वह लड़की है।

[1] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-17

भारतीय समाज में यह देखा जाता है कि अधिकांश परिवारों के लड़कों को बचपन से उच्च शिक्षा के लिए शहर या देश की राजधानी भेजा जाता है। यह बहुत कम पाया गया है कि उन लड़कों के साथ उनकी बहनों को भी पढ़ने के लिए शहर भेजा गया हो। उसका भी एक ही कारण है कि वह लड़की है।तो क्या हुआ कि वह लड़की है? लड़के -लड़कियों में भेद करना ही लड़कियों को मानसिक रूप से गुलाम बनाना है। 'निन्नी'को समाज की नजरों में हिकारत से देखा जाता है। 'निन्नी'कई तरह की यातनाओं से गुजरती है।

राजेन्द्र यादव कहते हैं- "रूपहले काँच पर वही काली-कलूट शक्ल थी,वही चमकते दांत,आँखों की सफेदी थी,वही जरूरत से ज्यादा लाल मसूड़े और साँवले होठ थे |"[1]

राजेन्द्र यादव अपनी एक पुस्तक में लिखते हैं-**" सच तो यह है कि हमारे सारे परंपरागत सोच में नारी को दो हिस्सों में बाँट दिया गया है। कमर से ऊपर की नारी और कमर से नीचे की औरत। कमर से ऊपर की नारी महिमामयी है,करुणा-भरी है,सुंदरता और शील की देवी है, वह कविता है, संगीत है, आध्यात्म है और अमूर्त है। कमर से नीचे वह काम कन्दरा है,कुल्सित और अश्लील है ,ध्वंसकारी है,राक्षसी है और सब मिलाकर नरक है। इसी बटे और दूसरे रवैए से हम उसके शरीर की ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर की यात्राएं करते हैं, उसके मातृत्व की शारीरिकता को नहीं, वात्सल्य की भावना को गरिमा देते हैं। नारी से अधिक नारी का आइडिया हमें सम्मोहित करता है।"[2]**

किस तरह धर्म और दर्शनशास्त्र की सहायता से पुरुष वर्ग अपने हित साधते रहे हैं।

[1] वही,पृष्ठ -12

[2] आदमी की निगाह में औरत,पृष्ठ-14

राजेन्द्र यादव कहते हैं –**"जब आप नारी के साथ होते हैं तो उसे केंद्र में रखकर कविताएं रचते हैं ,गीत बनाते हैं,कलाओं की सृष्टि होती है और जब उससे बचकर भागते हैं तो दर्शनशास्त्र और धर्म का निर्माण करते हैं।"**[1]

जब भी 'निन्नी'अपने-आपको देखती है या अपने बारे में सोचती है, तो उसे जीवन के प्रति काफी निराशा का भाव मन में उठने लगता है| न घर में, न कॉलेज में, न ही समाज में कहीं उसे आत्म सम्मान मिल पाता है। इस संसार में अपने आप को निरर्थक समझने लगती है। उसे लगने लगता है कि न मेरे लिए यह संसार है न ही मैं संसार के लिए हूँ।

'निन्नी' अपने बारे में क्या सोचती है ? क्यों सोचती है? इसके पीछे क्या है?आखिर जीने की लालसा क्यों नहीं है? जब मनुष्य हर तरह से हार जाता है तो, उसकी जीने की इच्छा खत्म हो जाती है| **उपन्यासकार कहते हैं-"लोगों को जीने के लिए कुछ न कुछ बहाने होते हैं-वर्तमान से कुछ लगाव, कोई लगन, कोई साथ या कोई स्वार्थ-'निन्नी' के लिए तो कुछ भी नहीं है .....न कोई सपना है, जो भविष्य के पर्दों के पार खड़ा हो कर जिंदगी को अपनी ओर खींचे; न कोई स्मृति है।"**[2]

नोबल पुरस्कार प्राप्त प्रसिद्ध उपन्यासकार जोसे सरामागो(Jose Saramago) अपने उपन्यास 'लिस्बन की घेरा बंदी का इतिहास' में स्त्री-सौंदर्य के आयाम पर दृष्टिपात किया है जो निम्न है-**" 'सेन्योरा मारीया' दुबली-पतली है, लंबी भी नहीं है, साँवली है, यहाँ तक काली लगती है, स्वाभाविक है**

[1] वही,पृष्ठ-14

[2] अनदेखे अनजाने पुल,पृष्ठ-108

कि उसके बाल घुंघराले हैं जिस पर उसे गर्व है, दूसरी कोई होती तो इस पर घमंड न करती क्योंकि जहां तक सुंदरता का सवाल है तो उससे वह जन्म से ही वंचित रही है | "[1]

जब हम सौंदर्य के आयाम पर बात करते हैं और वह भी वैश्विक स्तर पर प्रासंगिकता को ध्यान में रखते हुए तो हमें इस तरह के उद्धरण देने की जरूरत होती है। भारत तो ऐसे भी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक रूप से गैरबराबरी का महाकुंभ है। सारामगो ने 'स्त्री-सौंदर्य के आयाम' को अपने देश और दुनिया के अन्य देशों को ध्यान में रख कर समझाने की भरपूर कोशिश की है।

उनका मानना है कि जो स्त्री दुबली-पतली हो वह सुंदर नहीं है, जो लम्बी न हो वह भी सुंदर नहीं है, जो साँवली हो वह भी सुंदर नहीं है, जो मोटी हो वह भी सुंदर नहीं है। सारामगो ज़ोर दे कहते हैं कि "जहां तक सुंदरता का सवाल है, जो उपर्युक्त पैमाने के अंतर्गत आती हैं वे जन्म से ही सुंदरता से वंचित रही है|

दुनिया के अन्य देशों में भी ऐसी प्रथा रही है, लकिन वहाँ शैक्षणिक माहौल बेहत्तर होने के साथ ही काफी सुधार हुए हैं। लेकिन हिंदुस्तान में 'जाति व्यवस्था' को यथावत बनाए रखने में शिक्षित और कथाकथित बौद्धिक लोगों का ही अधिकांश हाथ रहा है। यहाँ सत्ता की लड़ाई के लिए बौद्धिक वर्ग सिर्फ एक वर्ग से आते हैं सिर्फ सामान्य वर्ग से । अन्य किसी वर्ग के लोगों को बौद्धिक मानते ही नहीं चाहे उसमें कितनी ही प्रतिभा क्यों न हो, इसे वरिष्ठ दलित साहित्यकार ओमप्रकाश बाल्मीकी ने अपनी आत्मकथा 'जूठन' भाग-2 के माध्यम से प्रमाणित कर चुके हैं।

किसी ने सही कहा था कि-अगर किसी देश को गुलाम बनाना हो तो सबसे पहले वहाँ के बुद्धिजीवियों को मार दो, उसके बाद लड़ाई बहुत आसान हो जाएगी। सत्ता में बैठे लोग कर्मचारी है असली पावर तो

[1] सरामगो जोसे,लिस्बन की घेरा बंदी का इतिहास, पृष्ठ-85

बुद्धिजीवी वर्गों के पास होता है जिनके इशारे पर सारी व्यवस्था काम करती हैं। हर देश में सत्ता संचालन के लिए ऐसे वर्ग होते हैं। जिनका काम है समय-समय पर देश के भविष्य के लिए दशा और दिशा देने के लिए चिंतन करना। पर हमारे देश में ऐसा नहीं हैं। यहाँ कुटील बुद्धिजीवियों की संख्या ज्यादा है। जो अपने वर्ग, अपनी जाति,अपने कौम ,अपने धर्म के हिसाब से अपनी बौद्धिक प्रतिभा का प्रयोग करते हैं। और पितृसत्ता को बचाने के लिए स्त्रियों को किसी भी हद तक शोषण किया जाता है जिसके लिए सिर्फ बुद्धिजीवी वर्ग जिम्मेदार हैं।

इसलिए जन्म से प्राप्त रूप-सौंदर्य चाहे जैसा भी हो उसे समानता और सामाजिक गरिमा के साथ सहजता पूर्वक स्वीकार करना, एक अच्छे समाज की निशानी है।

मालिक मोहम्मद 'जायसी' बेहद कुरूप थे। एक बार वे अमेठी के काव्य प्रेमी राजा के दरबार में पहुचे तो राजा समेत दरबार में उपस्थित तमाम लोग उन्हें देख कर हंसने लगे। जायसी ने अपने मधुर कंठ से बस एक अर्धाली सुनाई और सबको निरुत्तर कर दिया, **"मोहि कां हंससि कि कों हरहि।"**[1]

अर्थात मुझ पर हँस रहे हो या बनाने वाले ईश्वर रूपी कुम्हार पर।

इस तरह के प्रसंग से हमें सबक लेना चाहिए , पर ऐसा नहीं है। दुनिया के अधिकांश देशों में मानवता के विरुद्ध नियम-कायदे बने हैं और बन रहे हैं जहां कम से कम स्त्रियों को असमानता का शिकार तो होना ही पड़ता है।

राजेन्द्र यादव ने स्त्री सौंदर्य के आयाम को काफी गंभीरता से उठाया है। वे कहते हैं-**"चमड़ी का कालापन शरीर में किसी विटामिन की कमी के कारण होता है। अगर लगातार कुछ समय तक**

[1] सहियाकारों के विनोद प्रसंग(इंटरनेट से)

उस विटामिन की गोलियों को खाया जाए ,तो शरीर का रंग एकदम साफ भले न हो ,निखार अवश्य आएगा।"[1]

सुंदरता को लेकर कितने आयाम है? सुंदरता को किस तरह राजेन्द्र यादव ने विज्ञान से जोड़ने का काम किया है। आज कल तरह-तरह के सौंदर्य प्रसाधन बाज़ार में उपलब्ध है, जिनकी खूबियाँ टेलिविजन में जो दिखाई जाती है ,हम वही मान बैठते हैं। क्योंकि न हमारे पास प्रयोगशाला है न ही हम इसे बहुत गंभीरता से लेते हैं। न हमें यह पता चल पाता है कि उपयोग के दृष्टिकोण से कौन - सा सौंदर्य प्रसाधन लाभदायक है और कौन-सा हानिकारक। भारतीय समाज में धार्मिक सम्प्रेषण बहुत ही जनप्रिय है। जहां की जनता जितना धार्मिक होगा,वहाँ की जन समुदाय विज्ञान से उतना ही दूर होगा।

" **'निन्नी'को याद है, इस कुरूपता और कालेपन से मुक्ति पाने की इस तरह की लालसा कैसे बचपन से उसके भीतर कैद कबूतर की तरह फड़फड़ाया करती थी और कभी भगवान से प्रार्थना करती,तो कभी प्रसाद बोलती।"[2]**

'निन्नी'जैसी लाखों स्त्रियों को जब यह अहसास कराया जाता है कि तुम कुरूप हो, असुंदर हो, यह यातना स्त्रियों के लिए छोटी नहीं है। स्त्रियों के सारे गुण कालापन और कुरूपता के पीछे छुप जाती है। और दिखता है सिर्फ काला - कुरूप चेहरा।

भारतीय समाज में सबसे बड़ी समस्या है, उन काली और कुरूप युवतियों की शादी कराना। उससे भी ज्यादा संकट की घड़ी तब आती है जब लड़के वाले कालापन और कुरूपता के कारण लड़की को नापसंद कर देते हैं।

[1] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-86

[2] वही,पृष्ठ-87

2.2 अनदेखे अनजान में स्त्री- सौंदर्य और मानव मूल्य

अनदेखे अनजान पुल(उपन्यास) में राजेन्द्र यादव ने स्त्री-सौंदर्य और मानव मूल्य, कथाकथित आदर्शों की स्थिति का पर्दाफास किया है। निन्नी कहती है-"**आखिर ब.ए.पास किया है ,क्या जिंदगी भर बच्चा ही बने रहना है? बाहर नहीं निकलूँगी तो आत्मविश्वास कैसे आएगा? मुझे तो अपने पैरो पर खुद ही खड़े होना है .....। अपने लहजे से इस बार 'निन्नी'ने जिस ओर संकेत किया था,वही दादा का वीक पॉइंट है : उसकी शादी में पिछले दिनों जो दिक्कते घर वालों ने देखी थी, और घर में उसकी जो स्थिति थी, उससे धीरे धीरे सबके मन में और स्वंय 'निन्नी'के मन में ही यह बात जम गई थी कि गृहस्थी का सुख उसके लिए नहीं है।**"[1]

भारतीय मूल्य के द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि लड़के पढ़ने के लिए या घूमने के लिए शहर या अन्य कहीं जा सकते हैं पर लड़कियों के लिए यह समान्यतः ठीक नहीं समझा जाता है। इसका कारण यह है कि लड़कियों को शादी के बाद दूसरों के घर भेज दिया जाता हैं। कहा ये जाता है कि कितना पढ़ेगी आखिर घर में ही तो रहना है,ज्यादा पढ़ा कर क्या होगा? कालापन और कुरूपता की वजह से 'निन्नी'को लड़के वाले रिजैक्ट कर देते हैं। अब वह सोचने लगती है कि मुझे अगर इज्जत के से जीना है तो मेरे लिए एक ही लाइन हो सकता है वह है पढ़ाई की लाइन। घर वालों और बाहर वालों के मुंह से इतने बार सुन चुकी थी कि .....इस लड़की के लिए गृहस्थी का सुख नहीं है।

[1] अनदेखे अनजाने पुल,पृष्ठ-17

राजेन्द्र यादव 'निन्नी'के रंग रूप के बारे में कहते है -"**और सबके ऊपर था यह तीव्र बोध कि उसका रंग काला है, वह सुंदर नहीं है, उसके होंठ साँवले है और मसूढ़े जरूरत से ज्यादा लाल है और सारे चेहरे पर दांतों और आँखों के कोयों की सफेदी बड़ी डरावनी लगती है।"**[1]

'निन्नी'उन लाखों स्त्रियों का प्रतिनिधित्व के करती है। जिनका रंग काला है या कुरूप दिखता है। उन सब की पीड़ा का अनुभव, खुद राजेन्द्र यादव को इस उपन्यास को लिखते समय, उनके मन में जरूर उठा होगा।

राजेन्द्र यादव 'निन्नी'के माध्यम से कहते हैं-**"यह बताना मुश्किल है कि इस बोध को बनाने में दूसरों का हाथ कितना है और अपनी हीनतानुभूति कितनी,फिर भी इतना जरूर जानती है कि जब भी पहले पहल यह बात उसके मन में आई होगी,उसे लाने का श्रेय दूसरों का ही रहा होगा।"**

आगे राजेन्द्र यादव कहते हैं –" वह तो यहाँ तक कहती है कि शुरू-शुरू में तो अक्सर भूल भी जाया करती थी, लेकिन जब-जब दूसरों की आँखें, उसकी निगाहे देखती, उनकी बातें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष संकेत समझती तो यह बात झटके-से उसकी सारी चेतना पर छा जाती। उन दया और हिकारत की निगाहों को घर से स्कूल जाते और कॉलेज जाते-आते हुए अपने छोटे से शहर में उसे हर समय सहना पड़ता था। छोटे शहरों में सब एक दूसरे को जानते हैं शायद सबसे कठिन परिचितों की दया और हिकारत सह पाना।"[2]

सामाजिक व्यवस्था को बनाने और परिवर्तित करने में बुद्धिजीवी वर्गों की भूमिका दुनिया के हर समाज में महत्वपूर्ण होती हैं। और ये परिवर्तन भी बुद्धिजीवी वर्ग अपनी सुविधा को ध्यान में रख कर करते हैं जिससे उन्हें आगे चलकर परेशानी न हो।

---

[1] वही,पृष्ठ-17,18

[2] वही,पृष्ठ-18

राजकिशोर अपनी पुस्तक (स्त्री-पुरुष :कुछ पुनर्विचार) में कहते हैं-"मौजूदा सौंदर्यशास्त्र कामुकता को ही केंद्र में ही रख कर चलना चाहता है। शोभा, शालीनता, भव्यता, सादगी आदि मूल्यों की उपेक्षा की जाती है। सारा ज़ोर 'सेक्सी' दिखने पर है। जो स्त्री अपने चारों ओर जितनी कामोत्तेजना पैदा करने में सक्षम है, वह मौजूदा मानदंडों से उतनी ही सुंदर मनी जाएगी। यह यौन इच्छाओं के लिए एक निरंतर स्फुरण का काम करता है। बलात्कार इस संस्कृति का स्वाभाविक निष्पत्ति है।"[1]

'अनदेखे अनजान पुल' उपन्यास में जिस प्रश्न को राजेन्द्र यादव ने उठाया है, ठीक उसी प्रश्न पर राजकिशोर ने भी आलोचकीय दृष्टिकोण से प्रश्न की गहराई को देखते हुए चिन्ता व्यक्त किया है। जो समय समाज के लिए एक अच्छा संदेश है। भारतीय मूल्यों के अंतर्गत शोभा, शालीनता, भव्यता, सादगी आदि अच्छे मूल्यों को छोड़ कर हम 'सेक्सी' दिखने-दिखाने में ज़ोर देते हैं यह दुनिया के किसी भी देश के लिए ठीक नहीं है। नारी सम्मान के दृष्टिकोण से यह काफी निम्न स्तर का है और यह एक तरह से स्त्री का अपमान है।

स्त्रियों के जीवन के बारे में राजकिशोर बताते हैं-"निश्चित ही रूसी जीवन में स्त्रियों की महत्वपूर्ण भागीदारी है, लेकिन सत्ता से उन्हें वहाँ भी वंचित रखा जाता है। खटते स्त्री-पुरुष दोनों हैं, लेकिन महत्वपूर्ण निर्णय सिर्फ पुरुष लेते हैं। दूसरा उदाहरण शिक्षा जगत का है। सोवियत संघ के माध्यमिक स्कूलों में 60 प्रतिशत से ज्यादा शिक्षक स्त्रियाँ ही थी, लेकिन प्रधानाध्यापक के 60 प्रतिशत से ज्यादा पदों पर पुरुष थे। यही स्थिति चीन की भी रही है।"[2]

कई मायनों में रूस और चीन भारत से आगे है। वहाँ भी पितृसत्ता हावी है।

---

[1] राजकिशोर,स्त्री-पुरुष:कुछ पुनर्विचार,पृष्ठ-113

[2] राजकिशोर,स्त्री-पुरुष:कुछ पुनर्विचार,पृष्ठ-145

"वकील साहब के सारे बच्चों का रंग रूप भी साफ है और नाक-नक्शे भी दुरुस्त है, यही बेचारी जाने कैसे सबसे अलग जा पड़ी है। आगे परचूनिया कहता, जाने कैसे बेचारी की शादी होगी ? वह कहता चाहे न कहता, 'निन्नी'को लगता जैसे वह कह रहा हो।"[1]

परिवार वालों की धारणा,समाज की अवधारणा और सगे-संबंधियों की अवधारणा का असर इसप्रकार 'निन्नी'पर पड़ा है कि उसके मन में जो बातें पहले से नहीं थी वह भी उसे अहसास होने लगती है। कभी – कभी वह भूल जाती है, लेकिन फिर किसी न किसी के द्वारा उसे याद कराया जाता है कि तुम कुरूप..... हो। यह वेदना,पीड़ा इस कदर उसके मन में घर कर जाती है कि वह जीवन भर भूल नहीं पाती है। ऐसे भी किसी मनुष्य को यदि दस बार उसे अहसास कराया जाय कि तुम कुरूप .....आदि हो तो, वैसा नहीं होने पर भी मानसिक रूप से यातना के तौर पर ही याद जरूर रहेगा। इस मानसिक पीड़ा को देने में जिन लोगों का भी हाथ हो,उन लोगों को कम से कम सभ्य समाज के नहीं माना जा सकता। एक मनुष्य होने के नाते एक दूसरे के प्रति मनुष्यता का भाव तो होना ही चाहिए। अन्यथा मनुष्य सामाजिक प्राणी कैसे कहला सकता है? मनुष्य पृथ्वी का सर्वश्रेष्ठ प्राणी कैसे हो सकता है?

"बीच–बीच में विवाह के प्रसंग, चर्चे और प्रदर्शन के बाद अस्वीकरण, फिर रोन-पीटना, आत्महत्या के मनसूबे और तरह-तरह से पल-पल मिलती आत्मयातना ,सब मिलते रहे। "[2]

भारतीय समाज में जाने कितनी निन्नी जैसी स्त्रियाँ हैं जिन्हें प्रतिदिन इस अपमान भरी यातना से गुजरना पड़ता है। और यह निरंतर जारी है। पता नहीं निन्नी जैसी स्त्रियों को इस यातना से मुक्ति कब मिलेगी।

[1] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-18

[2] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-90

राजकिशोर कहते हैं-"जरा सोचिए, जिस पहले आदमी ने सिर्फ दो पैरों से चलना शुरू किया होगा उसे यह कितना अटपटा लगा होगा हो सकता है उसके झुण्ड के अन्य सदस्यों ने हँसी या विस्मय से उसका मजाक भी उड़ाया हो | " [1]

राजकिशोर का मानना कई मायनों में सही है हम समाज में अधिकांशत: यह मानते हैं कि पहले से बनी अवधारणा ही समाज में सर्वमान्य होते हैं| कोई नई अवधारणा जब आती है तो उसे जल्दी स्वीकार नहीं किया जाता है और लोग उसका मजाक भी उड़ाते हैं| लेकिन वही अवधारणा आगे चल कर पहले बनी अवधारणा को तोड़ने हुए प्रतिस्थापित हो जाती है|

आगे राजकिशोर कहते है "**दरअसल गुलामी पूरी की पूरी एक साथ नहीं आती | जैसे प्रेम धीरे-धीरे सुदृढ़ होता है ,वैसे ही गुलामी का फंदा भी धीरे-धीरे कसता जाता है| खास के स्त्री के जीवन में|"**[2]

शुरूआती दौर में स्त्री-सौन्दर्य के पैमाने वर्तमान से काफी अलग रहे होंगे | पितृसत्तात्मक समाज ने धीरे-धीरे स्त्री सौन्दर्य को पश्चिमी रंग दिया है और यही पैमाना आज भी हम मानने के लिए विवश हैं |क्योंकि जो भी पैमाने ,समाज में समाज को संचालित करने के लिए बनाए जाते है, वह सामान्य नहीं,विशिष्ट वर्गों के द्वारा बनाया जाता है |

राजेन्द्र यादव कहते हैं -"**स्त्री का अपना घर नहीं होता | घर बाप का होता है, पति का होता है या बाद में बेटे हा होता है-वह वहाँ सिर्फ मेहमान या शरणार्थी होकर रहती है| चूँकि व: आर्थिक या भौतिक रूप से पराश्रित है, इस लिए जानती है कि गैर जरूरी या असुविधा जनक होने पर भी किसी दिन उसे यह घर या संसार छोड़ना पड़ सकता है इसके लिए यह बेहद जरूरी हैं कि वह**

[1] स्त्री-पुरुष: कुछ पुनर्विचार,पृष्ठ -146
[2] स्त्री-पुरुष: कुछ पुनर्विचार,पृष्ठ -157

दूसरों के इस घर में अधिक से अधिक उपयोगी बनकर रहे | उसकी सारी कोशिश होती है कि इसी पराए घर को अपना मान कर ही अपने जीवन को सार्थकता सिद्ध करती रहे |[1] "

सामाजिक यथार्थ को देखने-समझने के बाद यह कहा जा सकता है कि राजेन्द्र यादव का कहना उचित है| आज भी देखा जाता है कि महिलाएं पुरुषों से अधिक काम करती है फिर भी जब पैसे की बात आती है तो पुरुषों के आगे हाथ फैलाना पड़ता है| क्योंकि शुरुआत से ये व्यवस्था महिलाओं के खिलाफ रही है|

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि 'अनदेखे अनजाने पुल' (उपन्यास) में अभिव्यक्त स्त्री-सौंदर्य के आयाम को इस अध्याय में उद्धरण के साथ विस्तार से चर्चा की गई है। कुरूपता के कारण निन्नी को जो आत्मग्लानि दूसरों के कारण झेलना पड़ता है, क्योंकि दूसरों के द्वारा बार-बार उसे याद कराया जाता है कि तुम कुरूप हो । जिसके कारण वह जीवन भर अपने-आपको सदमें में रखती है। ये आत्मयतना, उसके बचपन के दिनों से साथ ही शुरू हो जाती है। कभी-कभी काफी बौद्धिकता से वह प्रतीकार करने की कोशिश करती है। पर वह जिस समाज में रहती है। अंधविश्वास के कारण कुरूप निन्नी से सभी नफरत करते हैं और निन्नी के सामने आते ही अपसगुण समझते हैं। हो सकता है वर्तमान समाज के लिए यह बहुत बड़ी समस्या न हो पर, यातना झेल रही निन्नी जहां भी होगी। उसे पल-पल मिल रही आत्मयातना मौत से भी बड़ा अभिशाप है।

[1] देहरी भई विदेस ,पृष्ठ- 12

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन.पृष्ठ-17
2. वही,पृष्ठ -12
3. वही.पृष्ठ-14
4. वही,पृष्ठ-14
5. वही .पृष्ठ-108
6. सारामागुजोसे.(1999).लिस्बन की घेराबंदीकाइतिहास.नई दिल्ली.कांफ्लुनेंस इंटरनेशनल.पृष्ठ-85
7. सहियाकारों के विनोद प्रसंग(इंटरनेट से)
8. यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन .पृष्ठ-86
9. वही,पृष्ठ-87
10. वही ,पृष्ठ-17
11. वही, पृष्ठ-17,18
12. वही,पृष्ठ-18
13. राजकिशोर. (2000),(2007). स्त्री-पुरुष: कुछ पुनर्विचार. नई दिल्ली.वाणी प्रकाशन .पृष्ठ-113
14. वही ,पृष्ठ-145
15. यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन .पृष्ठ-18
16. वही,पृष्ठ-90
17. राजकिशोर. (2000),(2007). स्त्री-पुरुष: कुछ पुनर्विचार. नई दिल्ली.वाणी प्रकाशन .पृष्ठ-146
18. वही ,पृष्ठ- 157
19. यादव,राजेंद्र.(सं) (2009). देहरी भई विदेस. नई दिल्ली. किताबघर प्रकाशन,पृष्ठ-12

तीसरा अध्याय

3.1 सुंदर-असुंदर का द्वंद और अनदेखे अनजान पुल

हिन्दी उपन्यास के इतिहास को मूलतः प्रेमचंद पूर्व, प्रेमचंद युगीन और प्रेमचंदोतर, तीन भागों में विभक्त करके समझ सकते है। प्रेमचंद पूर्व युग में हमारी साहित्य चेतना दो प्रमुख प्रवृतियों से परिचालित थी। एक प्रवृति मनोरंजन की थी, दूसरी सामाजिक जागरण की। ऐयारी तिलस्मी, जासूसी चित्र-विचित्र रहस्यमय वासना परक प्रणय चित्रों से युक्त दोनों ही प्रकार के उपन्यास मनोरंजन के प्रवृति से संचालित थे। प्रेमचंद युग में उपन्यास पहली बार जमीन पर आई। हिन्दी उपन्यास के विकास क्रम में प्रेमचंद युग का विशेष महत्व है। प्रेमचंद युग की समय सीमा 1918 से 1936 तक मान्य है। गांधीवादी आदर्श जीवन प्रणाली तथा सत्य और अहिंशा के प्रबल समर्थक थे प्रेमचंद । प्रेमचंद ने नारी-जीवन और उसकी प्रमुख समस्याओं पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। वेश्यावृत्ति, दहेज और अनमेल विवाह की समस्या, बालविवाह, विधवा जीवन आदि समस्याओं को प्रेमचंद के समान ही उनके अन्य समकालीन लेखकों ने भी अपने उपन्यासों में उठाया है।गबन में प्रेमचंद ने पारिवारिक जीवन का मनोवैज्ञानिक चित्र उकेरा है। **नारी की आभूषणप्रियता,स्त्री सौंदर्य को बढ़ाने के उद्देश्य** से प्रेमचंद ने दिखाया है। व्यक्ति की दुर्बलताओं को प्रत्यक्ष किया है उपन्यास के अंत से पहले पुलिस, न्यायालय तथा वेश्या जीवन के पीड़ा को भी प्रकाश में लाया है। उपन्यास में कथानक के दो केंद्र हैं-'प्रयाग' से संबन्धित कथानक पूर्णतः पारिवारिक है। 'कोलकाता' का घटनाचक्र राजनीतिक और सामाजिक जीवन को समेत लेता है। प्रेमचंदोत्तर उपन्यास और उपन्यासकारों में ज्यादा उपन्यासकार स्त्री-सौंदर्य को केंद्र में रख कर उपन्यास की रचना नहीं की। राजेन्द्र यादव प्रेवह सुन्दर हो या असुन्दर, दोनों ही स्थितियों में शरीर को लेकर अत्यधिक परेशान है। बहुत सुन्दर शरीर पाया है तो दुनिया को कुछ नहीं समझती, और असुन्दर है तो अपने को कुछ नहीं मानती। मगर जिस केंद्र के आस-पास घूमती है, सजाती-संवारती, अहंकार और खीझ

अनुभव करती है, वह शरीर ही है। इसको यों भी कह सकते है कि वह अपने को अपनी नहीं, दूसरों की कीमत-लगाती आँखों से देखकर अस्तित्व की सार्थकता-निरर्थकता मानती है। राजेंद्र यादव के दूसरे उपन्यास 'कुलटा' में अत्यन्त चुम्बकीय सौंदर्य महिमा-मंडित नारी के माध्यम से इस सत्य को पाया जा सकता है कि जो बहुत सुंदर है वह दुनिया को कुछ नहीं समझती और वहीं दूसरी ओर 'अनदेखे अनजान पुल' उपन्यास की नायिका 'निन्नी'अपने को कुछ नहीं मानती। और अपने ही रूप-हीनता से संकुचित हो जाती है। और इस दौरान दोनों के भीतर वास्तविक अहम को उकेरने का प्रयत्न किया है, राजेंद्र यादव ने। मिसेज़ तेजपाल और निन्नी दोनों ही जब अपने को अपनी निगाह से देखती हैं तो अपनी सीमाओं और परिवेश से विद्रोह कर उठती हैं। विद्रोही दोनों हैं ;मिसेज़ तेजपाल का बहुत घोषित हो गया है, लेकिन निन्नी का विद्रोह कहीं से भी छोटा हीं है। **रवीन्द्रनाथ** की 'सुभाषिणी', रजनी पणिक्कर की 'काली लड्की' और मोहन सिंह सेंगर की 'अँधियारे तारे' की नायिकाएँ जिस तरह प्रकृति और समाज के हाथों पिसती नारियों के प्रति करुणा जागती हैं, निन्नी उस करुणा को भी अस्वीकार करती है। उसका व्यक्तित्व और अहम इन सबसे अलग है-उसकी कुंठा एक दूसरी तरह की चुनौती है। इसलिए उसकी आंतरिक बुनावट और बनावट भी इतनी सहज सरल नहीं है। रूप के हेंडीकैप ने निन्नी के मनोविज्ञान को दुहरे-तिहरे स्तरों पर ला खड़ा किया है। एक यह हेंडीकैप उसके मानसिक विकास का भी है और कुंठित विकास का कारण भी हैं; इसलिए आत्म-केंद्रित होकर वह अपने बचकाने सपनों और कृत्यों में अपेक्षाकृत बड़ी उम्र तक डूबी रहे, यह बहुत अस्वाभाविक नहीं है;दूसरे इसी हेंडीकैप ने उसे अतिरिक्त आत्म-सजग बना दिया है।

जिजीविषा के दो रूप हैं: जीने की विविशता और जीवन के प्रति निष्ठा । 'निन्नी'भी आज कहीं जिम्मेदार पद पर होगी। मनुष्य की महानता यही है कि वह अपने में अपना लक्ष्य और ध्रुव नहीं है, वह केवल एक सेतु है| **उषा प्रियंबदा** का उपन्यास **'भया कबीर उदास'** में सुंदरता के साथ कुरूपता और मानवता पर

बहुत ही साहस पूर्ण प्रश्न किया है। आखिर सुंदरता के पैमाने बनाते समय मानवता की कसौटी को दरकिनार कर देते हैं क्या ?

राजेन्द्र यादव कहते हैं –"घर में भाभी (माँ) रात –दिन माथे पर हाथ मारती रहती, "हाय इसका जाने क्या होगा .....? भगवान जाने कैसे इसका बेड़ा पार लगाएगा ? राम जाने क्या-क्या दिन दिखाएगी ये लड़की।"[1]

आगे राजेन्द्र यादव निन्नी की मानसिक पीड़ा को इस प्रकार अभिव्यक्त करते हुए कहते हैं-" कॉलेज में तो अक्सर सुनना पड़ता है, सत्यानाश हो इस कल्लो परी का, सारा सगुण ही बिगड़ दिया साली ने .....आरती निगम का कैसा प्रोफ़ाइल था,आप सामने आ मरीं। अरे महारानी जरा इधर ही सरककर बैठ जातीं ..... । और निन्नी अपमान संकोच से गड गड जाती । उसकी आँखों से आँसू बहने को हो आते । सिमटकर इतनी छोटी हो जाना चाहती कि अदृश्य हो जाए । निरीह भाव से एक तरफ सरक जाती कि 'देख लो भाई, आरती निगम का प्रोफ़ाइल देख लो....सुधा शर्मा की आँखें देख लो .....अर्चना सूद का जुड़ा देख लो .....मीर चाँदनी की मैचिंग देख लो..... । तभी कहीं से फिर गर्म सीसे की तरह कानों में आकर पड़ता, "आप क्यों नखरे दिखा रही हैं? आपको कोई नहीं निहार रहा चन्द्रमुखी। "[2]

निन्नी के मन में सुंदर-असुंदर का द्वंद चलते रहता है। कभी प्रतिउत्तर देने के लिए सोचती और जब कोई उत्तर नहीं दे पाती तो अपने -आपको हीन भावना से ग्रस्त कर लेती। उनकी यह मानसिक पीड़ा क्षणिक नहीं थी, घर में, स्कूल में, कॉलेज में, बाज़ार में, यों कहे कि हर जगह उसे बिना किये की सजा मिलती। उसके लिए दो रास्ते थे । पहला ये कि वह इन सब बातों का तार्किकता से प्रतिउत्तर देती या फिर अनसुना

[1] अनदेखे अनजाने पुल,पृष्ठ-18

[2] वही,पृष्ठ-18

करके अपनी पढ़ाई पर ध्यान देती। पर ऐसा संभव नहीं था। क्योंकि न तो वह समाज से अलग रह सकती थी न ही सुंदर-असुंदर की अवधारणा को नए ढंग से परिभाषित कर बदल सकती थी। घर वाले भी उसे कुछ न कुछ ताने मारते थे। घर की सबसे बड़ी समस्या 'निन्नी'थी। 'निन्नी'के बारे में सोचते-सोचते उनके पिता बीमार पड़े और कुछ दिनों में ही चल बसे। भारत में अंधविश्वास का इतिहास बहुत पुराना है| घर में और सगे संबंधियों में यहाँ तक चर्चा होने लगी कि 'निन्नी'खा गई अपने पिता को।

राजेन्द्र यादव ने सुंदर-असुंदर के द्वंद को इस प्रकार दिखाया हैं-" **अच्छे से अच्छे रंग और नक्शा का चेहरा अगर मनहूस और मुर्दा हो ,तो कुरूप और भद्दा लग सकता है,और भीतर की पुलक कुरूप से कुरूप चेहरे पर विश्वमोहिनी मुस्कान के इंद्रधनुष खिला सकती है।"**[1]

आगे राजेन्द्र यादव कहते हैं-**"रंग से तो आदमी सुंदर-असुंदर नहीं होता ; एक चीज होती है नमक, सलोनापन, लावण्य और वही सारे चेहरे पर चमकता है। खुद निन्नी को सैकड़ों ऐसे चेहरे याद है, जो देखने में तो साँवले है, लेकिन ऐसा नमक उन पर कि हजारों गोरे चेहरे पानी भरें।"**

इस तरह राजेन्द्र यादव सुंदरता के जितने भी आयाम हो सकते हैं।उन्होंने सारे आयामों की चर्चा बहुत ही मानवीयता के साथ किया है। 'निन्नी'की मानसिक पीड़ा को लिखते समय, पता नहीं राजेन्द्र यादव कितने बार उनकी आँखें नम हुई होगी। समस्या काफी गंभीर होने के बावजूद इस ओर अधिकांश साहित्यकारों का ध्यान नहीं गया जो विचारणीय है।

जब लोग 'निन्नी'को तरह- तरह से अपमानित करते हैं और प्रतिउत्तर देने के लिए विवश हो जाती है।

राजेन्द्र यादव निन्नी के पक्ष को किस प्रकार व्यक्त करते हैं -" **इसी का दूसरा पक्ष यह था कि हर 'सफ़ेद चमड़ी' में कुरूपता खोजनिकालकर उसे बड़ी क्रूर संतवना मिलती। .....क्या हुआ**

[1] वही,पृष्ठ-62

नीलिमा सूद का रंग साफ है .....चिक बोन्स तो ऐसे निकले है जैसे जबड़े टूट गए हों ..... । अर्चना के बाल हैं?चुहिया की पूछ-सी चोटियाँ इधर- उधर लटका कर चली आती है .....सुधा शर्मा का सिर .....जैसे लकड़ी पर घड़ा रख दिया हो ।"[1]

इस तरह से निन्नी के मन को थोड़े समय के लिए राहत महसूस होता । लेकिन कुछ ही समय बाद वह राहत छू मंतर हो जाता ।

राजेन्द्र यादव 'निन्नी'के घाव की पीड़ा का अनुभव करते हैं और कहते हैं – "**पिछली बार जब 'देखने वालों' ने उसे अस्वीकार किया था , तो वह उसके बाहरी व्यक्तित्व, यानी रंग और रूप का अस्वीकार था ..... मानो उसे ठोक -ठोक कर समझाया गया था कि वह देखने में रंग और रूप के लिहाज से हेय है .....और तब हर बार वह रोई थी .....क्योंकि अपने को यों हेय नहीं मानना चाहती थी । दूसरी बार दिल्ली से लौटते हुए उसे लगा,जैसे रंग रूप के पार उसके गुण और शील को अस्वीकार कर दिया गया । और इस बार लगा,उसकी भावना,उसकी आत्मा,उसके सम्पूर्ण अन्तबार्हय अस्तित्व को ही अस्वीकार कर दिया है| अब उसका मौरचा ध्वस्त था । हर विश्वास चूर था .....और चुपचाप यह स्वीकार लेने के सिवा कोई चारा नहीं था कि उसके लिए इस दुनिया में कोई सुख नहीं ।**"[2]

'निन्नी' अभी तक जिंदा है इसलिए नहीं कि आत्मसम्मान के लिए । उसे खुद नहीं पता है कि वह जिंदा क्यों है? अपने को खत्म करने के लिए भी हिम्मत की जरूरत होती है।उतना उसमें हिम्मत भी नहीं है। परिवार, समाज और यहाँ तक कि बड़े शहरों के बारे में बचपन से सुनती आ रही थी कि वहाँ स्त्री -पुरुष में भेद नहीं होता, वहाँ किसी को कोई नहीं पहचानते । सब अपने काम में व्यस्त रहते हैं। पर दिल्ली जाने

[1] वही,पृष्ठ-64

[2] वही,पृष्ठ-69

के बाद उसे महसूस हुआ कि है तो वह भारत के अंदर ही। उन्होंने बहुत ही कम दिनों में महसूस किया कि चाहे कही भी चले जाओ कुरूपता और असुंदर के लिए कहीं कोई जगह नहीं है इस दुनिया में। हर जगह वही नफरत और हिकारत। जिंदा रहते हुए भी उसे प्रतिदिन मारना पड़ता था। अलग अलग तरह के संबोधनों से प्रतिदिन उसका अपमान किया जाता था। दुनिया के किसी भी मनुष्य के लिए ऐसा जीवन जीना बार-बार मरने के बराबर है।

किस तरह निन्नी अपमान सहते-सहते चिड़चिड़ा हो गई है। अब वह सोचती है कि मैं इसके लिए दोषी नहीं हूँ, तो मैं क्यों सुनूँ सबों की अपमान भरी बातें।

राजेन्द्र यादव कहते हैं –"**एक उद्धत भाव धीरे धीरे मन में आ गया था –हाँ, मैं कुरूप हूँ ,काली हूँ , करो किसको क्या करना है| उसे किसी से शादी नहीं करनी,किसी से प्यार नहीं करना .....। ये रास्ते अब उसने हमेशा हमेशा के लिए बंद कर दिये हैं .....** ।"[1]

डॉ.विनोद वर्मा कहते हैं –" नारी की सच्ची सुंदरता उसकी भीतरी शक्ति में है न कि बाह्य रूप में ।"[2]

यह सूत्र हमें यह ज्ञान देता है कि नारी का वास्तविक सौंदर्य उसके सुंदर सुडौल शरीर में निहित नहीं है। यह एक अत्यंत गंभीर सत्य है तथा पुरुषों को अपने लिए योग्य जीवन साथी चुनने में अच्छा मार्गदर्शन करता है। आंतरिक शक्ति, आत्मविश्वास तथा अपने आपको समझने की क्षमता के बिना केवल बाह्य सुंदर रूप अधिक समय तक टिक नहीं सकता।

यह देखा गया है कि कुछ स्त्रियाँ पुरुषों को आकर्षित करने के लिए तथा सहभागी चुनने के लिए सभी प्रकार के बनावाटी उपायों का सहारा लेती हैं जैसे बालों को रंगना या इसी प्रकार के अन्य सैकड़ों उपाय

[1] वही ,पृष्ठ-70

[2] नारी कामसूत्र ,पृष्ठ- 47

। जो संबंध कृत्रिम कारणों पर आधारित होते हैं,अधिकतर उनका अन्त दुखद ही होता है। फिर भी आज कल के दौर में कृत्रिमता को ही पसंद किया जाता है।

3.2 भूमंडलीकृत सौंदर्य ,स्त्री एवं पितृसत्ता जटिल अन्तः संबंध

भूमंडलीकरण के दौर में जहां अमीर लोगों को वैश्वीकरण का जबर्दस्त लाभ हुआ है वही गरीब और निरीह प्राणी को उसके हक़ से वंचित किया गया। भूमंडलीकरण का वैश्विक स्तर पर जिन्हें सबसे ज्यादा हानि हुआ है वह है 'स्त्री'। विश्व की आधी आबादी महिलाओं की है। जिन्हें हर तरह से शोषण का शिकार बनाया गया । दुनिया के अधिकांश विकसित और विकासशील देशों में,चाहे स्त्री अधिकारों का मामला हो या स्त्री जीवन से संबन्धित कोई अन्य समस्या ,उन समस्याओं को नज़र अंदाज कर, पुरुषों ने सिर्फ स्त्रियों का उपयोग किया है।

"आज भी परिवार नमक संस्था लड़कियों की शिक्षा और भरण पोषण में दोहरा बर्ताव करती है अतः महिला आरक्षण बिल पारित कर सरकार महिलाओं की वास्तविक भागीदारी को संभव बना सकती है। इससे महिलाए आत्मनिर्भर बनेंगी और सामाजिक व्यवस्थाओं में क्रांति करी बदलाव आएगा।"[1]

भारतीय समाज में पितृसत्ता के वजह से स्त्रियों का शोषण-दमन हो रहा है। महिलाओं के अधिकार सीमित है। पुरुष कोई भी कानूने बनाने से पहले उनकी बारीकी को देख लेते हैं कि कहीं आगे चल कर कोई समस्या तो नहीं आएगी। पुरुष अपना रास्ता बना कर ही आगे बढ़ते हैं। सब

[1] पालीवाल सूरज,स्त्रीकल,स्त्री का समय और सच,अंक-7,अप्रैल,2010,पृष्ठ-170

कुछ हो पर सत्ता की बागडोर महिलाओं के पास नहीं होनी चाहिए। इससे पुरुषों पर संकट आ सकता है। इसलिए पुरुष महिलाओं को पूर्ण समानता का अधिकार देने से डरते हैं।

प्रणोति चिरमुले कहती है –"गौर तलब है कि बिना पितृसत्ता पर सवाल उठाए महिलाओं के स्थितियों के बारे में कोई राय कायम करना आसान नहीं है। भारतीय समाज की संरचना में पितृसत्ता इस तरह गुथी हुई है कि कई बार तो इसे पहचानना ही मुश्किल होता है और इसकी भूमिका पर सवाल खड़े करना तो और भी कठिन होता है। जब तक निर्णय लेने के सारे अधिकार पुरुषों के हाथ में सुरक्षित रहेंगे ,तबतक किसी भी तरह का सशक्तिकरण असंभव है।"[1]

भारतीय सामाजिक संरचना बहुत ही जटिल है। जिसके कारण यह बहुत मुश्किल है कि पितृसत्ता की बारीकी को आसानी से पहचान पाना। क्योंकि समय के साथ पितृसत्ता के रूप और कार्य - व्यापार भी बदलते रहते हैं।

क्षमा शर्मा कहती है-" पितृसत्ता ने किस चालाकी से धर्म रचे हैं,इतिहास रचा है और जानबूझ कर महिलाओं को अपदस्थ किया है। वैसे भी जिन ग्रन्थों को महान बताया गया है (लेखकों के) उनमें स्त्रियों की एक खास किस्म की परंपरागत छवि पेश की जाती है। जैसी स्त्रियाँ पुरुषों को पसंद करते हैं, अपनी रचनाओं में वे उनकी वैसी ही छवि गढ़ते हैं। आमतौर पर मिथकों में जैसी स्त्रियाँ सृजित की गई है वे पितृसत्तात्मक व्यवस्था को बनाए रखने का औज़ार भर हैं। त्यागमयी,पतिव्रता सती स्त्री की यह छवि मर्दवादी विमर्श ने बनाई है और यह दुनिया के हर मिथक में मौजूद है। आज भी 'हिस स्टोरी' को

[1] समकालीन जनमत,मार्च,2010

आसानी से 'हर स्टोरी' बनाने नहीं दिया जाता है। दरअसल भाषा पितृसत्तात्मक दंडविधान का प्रतीक है|"[1]

इन ग्रन्थों की असलियत कुछ और ही है। जिस ग्रंथ में पुरुषों का गुणगान किया गया है और स्त्रियों को मर्यादित दिखाया गया है| उन ग्रन्थों को दुनिया के बुद्धिजीवियों ने महान घोषित करने में कोई कसर नहीं छोडी।

शहीद अमीन ने लिखा है -" राष्टवादी इतिहास किस तरह बना और यह इतिहासकारों का विषय रहा है। इतिहासकारों ने इतिहास बनने की घटनाओं का विवरण प्रस्तुत किया है। आधुनिक भारत के इतिहास लेखन में जितनी बातों को समाहित किया गया उतनी ही बातों को छोड़ भी दिया गया है। किसी घटना को इतिहास में समाहित करने का पहला आधार गांधीवादी राजनीति के अहिंसक प्रतिमानों के तहत राष्टवादी आन्दोलनों में सहभागिता रही है (अमीन ने इसे योगदान के रूप में बताया है) इसलिए हिंसा का रास्ता अख़्तियार करने या कांग्रेस की विचार धारा को चुनौती देने वाली राजनीतिक गति विधियों को असंगत करार दिया गया। मैपिला विद्रोह या 1920 का चौरा चौरी कांड या नेता जी सुभास चन्द्र बॉस की आज़ाद हिन्द फौज की गतिविधियों और 1940 के 'भारतीय शाही नौ सेना' के विद्रोह को इसी रूप में देखा गया है। इन सबों को नज़रअंदाज़ कर दिया गया है।"[2]

भारत का आधुनिक इतिहास गांधीवादी मूल्यों के आधार पर लिखा गया है। जिसमें राष्ट्रवादी मूल्यों में महिलाओं का योगदान नहीं के बराबर समाहित किया गया है। एक पार्टी विशेष के

[1] शर्मा क्षमा,स्त्रीत्ववादी विमर्श:समाज और साहित्य,पृष्ठ-121,123

[2] आधुनिक भारत का सांस्कृतिक इतिहास,(भूमिका से)

सिद्धांतों के आधार पर सम्पूर्ण आधुनिक इतिहास लिखे गए है जिसमें महिलाओं के योगदान को भुला दिया गया है।

'अनदेखे अनजाने पुल' में उठाए गए सवाल भी आधुनिक समाज के ही है।

आगे **राजेन्द्र यादव कहते हैं-"युग युग के नारी-संस्कार थे ,जो पुरुष को खिलाकर सार्थकता की व्यापक अनुभूति में पुलक उठे थे। "**[1]

ये युग-युग से चली आ रही नारी संस्कार एक पक्षीय है। यही संस्कार जिस दिन पुरुषों में भी आ जाए तो उस दिन से ये संस्कार की सार्थकता, समानता के लिए एक जरूरी कदम होगा । सामाजिक मूल्यों को एक पक्षीय ढंग से स्त्रियों के मन-मस्तिष्क में बड़ी ही चालाकी के साथ बैठाया गया है। आज भी जब तक पुरुष खाना नहीं खाएगा तब तक घर की महिलाएं खाना खा नहीं सकतीं।अगर खाना खा लिया तो उसे अनेक ऐसे अपमान जनक शब्दों से नवाजा जाता है। पितृसत्ता पर जिन घरों में प्रश्न उठाए जाते हैं, उन घरों में, उन सवालों को दबाने के लिए महिलाओं को ही तैयार किया जाता है। उसे इतनी आत्मायातना दी जाती है कि वह जीवन भर सवाल करने के लायक नहीं रहती। जिससे हार कर वह सारी जिंदगी अपने अधिकार के बिना जीती है। ये उन घरों में ज्यादा प्रचलित है। जिनके घरों में आधुनिकता ने दस्तक दे दिया है। ऐसी सामाजिक अवधारणा काफी तेजी से समय के अनुकूल,यानी भूमंडलीकरण के हिसाब से बदल रही है। ये खुशी की बात है और गम की भी ।

कुछ अच्छी चीजें हम पश्चिम से लेते हैं और अपने संस्कार में शामिल कर लेते हैं। लेकिन खासकर पश्चिम ने जिस तरह स्त्री सौंदर्य को निम्न स्तर तक गिराया है| वैश्वीकरण के पहले ऐसा नहीं था ।

[1] अनदेखे अनजान पुल,पृष्ठ-28

"'निन्नी'को अपने दुर्भाग्य के प्रति इतना अधिक विश्वास था कि किसी प्रिय और मधुर स्वप्न को चेतन मन की आँखों के सामने लाते डरती थी।"[1]

था तो यह ईश्वरीय दुर्भाग्य लेकिन जिस समाज में 'निन्नी'रहती थी वहाँ की सामाजिक मूल्य ने उसके , उस दुर्भाग्य को विश्वास में बदल दिया था । घर हो या बाहर, हर जगह उसके आत्म सम्मान को ठेस पहुंचाया जाता था। जिससे वह जिंदगी भर आहत रही ।

"कहाँ ये, एक से एक कीमती कपड़ों में नये से नये फैशन में सजी पंजाबिनों और कहाँ एक छोटे शहर की फूहड़ –कुरूप, काली-कलूटी वह ?"[2]

जब 'निन्नी'अपने रंग रूप और अन्य हमउम्र लड़कियों से तुलना करती है तब वह झल्ला जाती है| और अपने आप को बहुत ही हीन, समझने लगती है|

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि 'निन्नी'उच्च शिक्षित होने के बावजूद उसे समाज में सम्मान नहीं मिलता है क्योंकि वह दिखने में काली और कुरूप है| लगता है समाज में सम्मान पाने के लिए दो बातें आवश्यक हैं । एक यह कि वह सुन्दर हो और दूसरा उच्च जाति के कुलीन परिवार से संबंध रखता हो । उसे ही सम्मान पाने का अधिकार हैं । अगर ऐसा है तो यह मानवता के खिलाफ एक सोची समझी षड्यंत्र है|उस समाज में मानवीय मूल्यों का ह्रास हो चुका है| उस समाज में मानवीय मूल्यों को पुनः स्थापित करने की आवश्यकता है। और निन्नी की दशा और भी यातनापूर्ण होने की संभावना है| क्योंकि समज में रहते हुए सामाजिक तिरस्कार झेलना, बार बार मरने के बराबर है।

[1] अनदेखे अनजान पुल, पृष्ठ-31

[2] वही,पृष्ठ-39

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन .पृष्ठ-18
2. वही,पृष्ठ-18
3. वही,पृष्ठ-62
4. वही,पृष्ठ-64
5. वही,पृष्ठ-69
6. वही ,पृष्ठ-70
7. वर्मा ,विनोद .(2000),(2004).नारी कामसूत्र. नई दिल्ली .राधाकृष्ण प्रकाशन पृष्ठ- 47
8. शर्मा क्षमा,स्त्रीत्ववादी विमर्श:समाज और साहित्य,पृष्ठ-121,123
9. आधुनिक भारत का सांस्कृतिक इतिहास,(भूमिका से)
10. यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन.पृष्ठ-28
11. वही,पृष्ठ-31
12. वही,पृष्ठ-39
13. पालीवाल,सूरज.(अंक-7,अप्रैल,2010).स्त्री-काल का समय और सच.पृष्ठ-170
14. समकालीन जनमत पत्रिका.(मार्च,2010)अजमेर,राजस्थान.पृष्ठ - 15

उपसंहार

उपसंहार

"अनदेखे अनजान पुल (उपन्यास) में स्त्री-सौंदर्य के आयाम" पर शोध करते हुए मैं कई बार 'निन्नी'की आत्मयातना की स्वानुभूति तो नहीं,पर सहानुभूति जरूर महसूस किया। शोध करते समय उनकी पीड़ा को मैंने निकट से अनुभव किया। लगा, यही कहीं से 'निन्नी'मुझे पुकार रही हो कि मेरी गलती क्या है? मुझसे इस तरह से व्यवहार क्यों किया जाता है? मैंने तो किसी का कुछ भी नहीं बिगाड़ा है। मैंने तो कभी किसी का अहित भी नहीं सोचा, न ही किया ,फिर मुझसे इस तरह नफरत क्यों करते हैं , लोग ? मैं काली दिखती हूँ ,कुरूप दिखती हूँ तो इसमें मेरा क्या क़ुसूर है?

बिना गलती की सजा दी जा रही है| वह भी सजा देने के बाद लोगों को जेल में रखा जाता है मुझे तो इसी समाज में रख कर बार- बार मानसिक रूप प्रताड़ित किया जाता है। मैं पढ़ी-लिखी हूँ ,सभ्य भी हूँ ,सामाजिक दायित्व भी निभा सकती हूँ। फिर भी मुझे हेय दृष्टि से देखा जाता है, क्यों ? मेरी गलती क्या है?

वह बार-बार अपमानित हो कर जब अपने आप से प्रश्न करती है। प्रश्न का उत्तर नहीं मिलने पर वह कई बार अपने आप से विद्रोह कर बैठती है| पर समाज में उसकी सुनने वाला है, कौन ? उससे किसी को बात तक करना गबारा नहीं है| फिर भी 'निन्नी'जी रही है| क्योंकि अपने आपको खत्म करने के लिए उसके पास हिम्मत नहीं है| सम्पूर्ण जीवन यह ढूंढते हुए बीत जाता है कि सुंदरता के पैमाने क्या है? जो काली या कुरूप हो, उसे समाज में सम्मान के साथ जीने का कोई अधिकार नहीं है, क्या?

निन्नी जैसी सभ्य,उच्च शिक्षित स्त्रियाँ जो गोरी न हो या यों कहें कि कुरूप दिखती हो, उन्हें समाज में सभ्य क्यों नहीं माना जाता है| उन्हें समाज में सम्मान क्यों नहीं मिलता हैं| इसी प्रश्न का जवाब तलाशने के लिए मैंने इस शोध विषय पर गहनता से अध्ययन करते हुए विचार किया है| विचार-विमर्श के दौरान मैंने प्रस्तुत शोध विषय को तीन अध्यायों में बांटा है|

पहले अध्याय में मैंने सौंदर्य संबंधी भारतीय दृष्टिकोण और पाश्चात्य अवधारणा को ऐतिहासिक संदर्भों को देखते हुए 'अनदेखे अनजान पुल' के मूल प्रश्न पर चर्चा की है। उपन्यास की नायिका 'निन्नी'के साथ घट रही मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, भौतिक यतनाओं के रेशों को खोजने का प्रयास किया है| सौंदर्य को परिभाषित करने वाले भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों की सौंदर्य के प्रति दृष्टिकोण को उल्लेखित किया हैं।

दूसरे अध्याय में मैंने 'अनदेखे अनजान पुल' और सौंदर्य के आयाम पर चर्चा की है| हिंदी उपन्यास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और सौंदर्य की अवधारणाओं के संक्षिप्त परिचय देते हुए 'अनदेखे अनजाने पुल' के मूल प्रश्न से जोड़ा है| समाज के बुद्धिजीवियों पर प्रश्न करते हुए इस सवाल का जबाव ढूँढने का प्रयास किया है कि इसके लिए कौन जिम्मेदार हैं ?

तीसरे अध्याय में मैंने सुन्दर-असुन्दर का द्वंद और अनदेखे अनजाने पुल की चर्चा किया है| इसके साथ ही अनदेखे अनजान पुल में स्त्री और पितृसत्ता के अन्तः संबंध पर गहराई से चर्चा किया है|

कुल मिलाकर, इस शोध में 'निन्नी'जैसी लाखों स्त्रियों को समाज के द्वारा मिल रही आत्मयातना,आत्मपीड़ा और बिना किये की सजा को मूल प्रश्न के रूप में उद्घाटित किया गया है|

संदर्भ सूची

संदर्भ सूची

आधार ग्रंथ :

यादव ,राजेंद्र . (1994). अनदेखे अनजान पुल. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन।

सहायक ग्रंथ :

1.मेघ, रमेश कुंतल . (2001).अथातो सौंदर्य जिज्ञासा.नई दिल्ली.वाणी प्रकाशन।

2. मेघ ,रमेश कुंतल. (2001).साक्षी है सौंदर्यप्रश्निका. नई दिल्ली. नेशनल पब्लिशिंग हाउस।

3.शेष, हेमंत. (संपादक). (2001). सौंदर्यशास्त्र के प्रश्न. नई दिल्ली .पब्लिशिंग हाउस।

4. यादव,राजेंद्र . खेतान, प्रभा .दुबे ,अभय कुमार. (2010). पितृसत्ता के नए रूप. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन।

5 नरसिंहाचारी,एस.टी. (2001). सौंदर्यशास्त्रीय.नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन।

6.गुप्त ,हनुमान प्रसाद. (2004).नारी उत्पीड़न और जागरूकता.नई दिल्ली . ढींगरा एंड कम्पनी |

7. जोशी, गोपा. (2006).भारत में स्त्री-असमानता. दिल्ली .दिल्ली विश्वविदायलय प्रकाशन |

8.वाशिष्ठ,सरिता. (2010).महिला और कानून.दिल्ली. कल्पना प्रकाशन |

9.आर्य,साधना.(सं),मेमन निवेदिता लोकनीता जिनी.(स.स.).(2011).नारीवादी राजनीति. दिल्ली. दिल्ली विश्वविद्यालय प्रकाशन |

10.जैन **,** अरविंद **.** (2011) .औरत होने की सजा**.**नई दिल्ली .राजकमल प्रकाशन |

11. कुमार ,विमल.(1998). सौंदर्य के तत्व. नई दिल्ली. राजकमल प्रकाशन |

12.जर्मेन **,**ग्रीयर. (2005).बधिया स्त्री.नई दिल्ली . राजकमल प्रकाशन |

13.पाण्डेय.माघवेंद्र.(2001).प्रसादसौंदर्य बोध और हिन्दी नवगीत. वाराणसी. विश्वविद्यालय प्रकाशन |

15. मधुरेश. (2011). हिन्दी उपन्यास का विकास. इलाहाबाद .सुमित प्रकाशन |

16. अमरनाथ.(2013).हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली.दिल्ली.राजकमल प्रकाशन|

17. तिवारी ,रामचन्द्र, (2014).हिंदी का गद्य साहित्य. वाराणसी. विश्वविदयालय प्रकाशन |

18. यादव,राजेंद्र. (2008).अठारह उपन्यास. नई दिल्ली. राधाकृष्ण प्रकाशन |

19.पालीवाल,सूरज.(2004).समकालीन हिंदी उपन्यास.पंचकूला.हरियाणा साहित्य अकादमी |

20. सिन्हा, मृदुला. (2007). मात्र देह नहीं है औरत. नई दिल्ली. सामयिक प्रकाशन |

21.पाटणकर,रा.भा. (1990). सौंदर्य मीमांशा.नई दिल्ली . साहित्य अकादमी |

22.यादव,राजेंद्र.(सं) (2009). देहरी भई विदेस. नई दिल्ली. किताबघर प्रकाशन |

23. राजकिशोर . (2000) , (2007). स्त्री – पुरुष: कुछ पुनर्विचार. नई दिल्ली . वाणी प्रकाशन |

24. सिंह, सुधा.(2008).ज्ञान का स्त्रीवादी पाठ.दिल्ली .ग्रंथ शिल्पी प्रकाशन |

25. त्रिपाठी, कुसुम. (2010) .स्त्री अस्मिता के सौ साल,भाग -1. मुंबई. संस्कार साहित्य माला प्रकाशन |

26. शाह,प्रियंका.(2012).स्त्री उत्पीड़न; कामुकता,हिंसाचार और मीडिया, नई दिल्ली स्वराज प्रकाशन |

27.सिंह ,निशांत. (2010). महिला राजनीति और आरक्षण . नई दिल्ली .ओमेगा पब्लिकेशन |

28.यादव, राजेंद्र.(2006).आदमी की निगाह में औरत . नई दिल्ली .राजकमल प्रकाशन |

29.वर्मा ,विनोद .(2000),(2004).नारी कामसूत्र. नई दिल्ली .राधाकृष्ण प्रकाशन |

30. अरोड़ा, सुधा (2009). आम औरत :जिंदा सवाल. नई दिल्ली. सामयिक प्रकाशन |

31 . यादव ,राजेन्द्र . (1999).अठारह उपन्यास .नई दिल्ली . राधाकृष्ण प्रकाशन |

32. सिंह,इंद्र बहादुर .(2002).सौन्दर्य और रचनाशीलता .दिल्ली. अनंग प्रकाशन |

33. आबिदी,मिश्कात.(2003). सौन्दर्यशास्त्रीय आलोचना के नये आयाम.दिल्ली .अनंग प्रकाशन |

34. नसरीन, तसलीमा (2009).औरत का कोई देश नहीं. दिल्ली . वाणी प्रकाशन |

शब्दकोश

1. प्रसाद,कालिका.सहाय,राजवल्लभ.श्रीवास्तव,मुकुन्दीलाल.(सं.).(2011).बृहदहिन्दी शब्दकोश.वाराणसी.ज्ञानमण्डल लिमिटेडप्रकाशन .
2. वर्मा,रामचंद्र.(2012).लोकभारती बृहत प्रामाणिक हिंदी कोश .इलहाबाद.लोकभारती प्रकाशन .

पत्र-पत्रिकाएं

1. चन्दन,संदीप.(सं.).(अंक-7/अप्रैल/2010).स्त्रीकाल(स्त्री का समय और सच).वर्धा,महाराष्ट्र से प्रकाशित |
2. प्रजापति ,महेंद्र.(सं.). (अक्टूबर ,मार्च,2012-13). समसामयिक सृजन.नई दिल्ली |
3. सीमा,ओझा(सं.). (अक्टूबर,2012).आजकल |

फिल्में

1. "सत्यम शिवम सुंदरम", निर्देशक राजकपूर;1978,
2. "राम तेरी गंगा मैली", निर्देशक,राजकपूर;2012
3. "बाज़ार", निर्देशक, सागर सरहदी;1982
4. "अंकुर" निर्देशक,श्याम बेनेगल;1974
5. "लक्ष्मी" निर्देशक,नागेश कुकुनूर,2014
6. फायर ,निर्देशक-दीपा मेहता ,1996
7. निशांत ,निर्देशक-श्याम बेनेगल ,2010
8. मंडी ,निर्देशक-श्याम बेनेगल ,1983
9. बॉबी ,निर्देशक-राजकुमार,1973

इंटरनेट

1. www.wikipedia.org
2. http://gadykosh.org

****